उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

DCEPA-104
कार्मिक प्रशासन–II

खण्ड 01 कार्मिक प्रबन्ध नीतियाँ एवं व्यवहार

इकाई–01 कार्मिक नीति 5–10

इकाई–02 भर्ती 11–17

इकाई–03 पदोन्नति 18–26

इकाई–04 प्रशिक्षण 27–32

इकाई–05 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन 33–39

खण्ड 02 कार्य परिस्थितियाँ एवं सेवा की शर्तें

इकाई–06 वेतन प्रशासन (प्रोत्साहन तथा अन्य लाभ सम्मिलित करते हुए) 41–48

इकाई–07 आचरण एवं अनुशासन 49–57

इकाई–08 प्रशासनिक नैतिकता तथा सरकारी सेवाओं में निष्ठा 58–67

खण्ड 03 नियोक्ता–नियोजक सम्बन्ध

इकाई–09 कर्मचारी संघ 69–73

इकाई–10 संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी 74–78

इकाई–11 सार्वजनिक सेवकों (कर्मचारियों) के अधिकार 79–85

इकाई–12 अभिप्रेरणा एवं मनोबल 86–92

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

DCEPA-104 कार्मिक प्रशासन–II

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 सत्यकाम — **कुलपति**
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 सन्तोषा कुमार — निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 वी. के. राय — राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 नन्द लाल भारती — लोक प्रशासन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्रो0 पंकज कुमार — राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 दीपशिखा श्रीवास्तव — सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 शिव प्रताप राय — सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, एस.जी.एन. राजकीय पी0जी0 महाविद्यालय, मोहम्मदाबाद गोहना, मऊ

सम्पादक / परिमापक

डॉ0 आनंदानंद त्रिपाठी — सह–आचार्य, राजनीति विज्ञान, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ0 सोहिनी देवी — सहायक आचार्य, लोक प्रशासन, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

2024 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2024

ISBN-978-81-19530-56-4

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराये गये हैं। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नही है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही है।

प्रकाशन : उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक : विनय कुमार, कुलसचिव प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रक : चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42 / 7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज– 211006

खण्ड–1

कार्मिक प्रबन्ध नीतियाँ एवं व्यवहार

इस खण्ड में 5 इकाइयां सम्मिलित हैं जो कार्मिक प्रबन्ध की नीतियों एवं व्यवहार की विभिन्न संकल्पनाओं से संबंधित हैं।

इकाई 01 कार्मिक नीति : इस इकाई के अन्तर्गत सार्वजनिक प्रशासन में कार्मिक नीति की केन्द्रीय भूमिका को रेखांकित किया गया है। इस संकल्पना से अवगत कराया गया है कि एक सफल संगठन के लिए सुदृढ़ और प्रभावी कार्मिक नीति आवश्यक होती है। इसी क्रम में इस तथ्य पर प्रकाश डाला गया है कि सुदृढ़ कार्मिक नीति एक प्रभावी और गतिशील प्रशासनिक संरचना का आधार है। सन्दर्भ को विस्तार देते हुए भारत में कार्मिक नीति की प्रकृति पर विचार किया गया है।

इकाई 02 भर्ती : इस इकाई के अन्तर्गत भर्ती के अर्थ एवं महत्व को स्पष्ट करते हुए आन्तरिक भर्ती अथवा पदोन्नति एवं बाहरी अथवा प्रत्यक्ष भर्ती पर प्रकाश डाला गया है। भर्ती की क्या समस्याएँ हैं, भारत में भर्ती प्रणाली का संचालन कैसे होता है, इस परिप्रेक्ष्य में भी सम्यक विचार प्रस्तुत किया गया है।

इकाई 03 पदोन्नति : इस इकाई के अन्तर्गत पदोन्नति के अर्थ एवं महत्व पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। साथ ही पदोन्नति के प्रकार, पदोन्नति के सिद्धांत पर विचार किया गया है।

इकाई 04 प्रशिक्षण : इस इकाई के अन्तर्गत प्रशिक्षण के अर्थ, उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डाला गया। प्रशिक्षण के सन्दर्भ को आगे बढ़ाते हुए प्रशिक्षण के प्रकार एवं प्रशिक्षण की समस्याओं से अवगत कराया गया है।

इकाई 05 कार्य निश्पादन मूल्यांकन : इस इकाई के विषयवस्तु के अन्तर्गत कार्य निष्पादन मूल्यांकन के अर्थ, आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इसके उद्देश्य, मूल्यांकन के पद्धतियों एवं इसको प्रभावित करने वाले कारकों पर विचार किया गया है।

इकाई–01 कार्मिक नीति

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 नीति निर्धारण का अर्थ

1.3 कार्मिक नीति एवं संवैधानिक पर्यावरण

1.4 आधुनिक कार्मिक के उत्तरदायित्व

1.5 कार्मिक प्रशासन पर प्रशासनिक सुधार आयोग का दृष्टिकोण

1.6 कार्मिक विभाग

1.7 कार्मिक नीति का नवीन नीति परिदृश्य

1.8 सारांश

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उददे्श्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप–

- विभिन्न प्रकार की मानकीय कार्मिक नीतियों एवं नियमों को समझ सकेंगे।
- कार्मिक नीतियों एवं नियमों में मौजूद अन्तरालों का वर्णन कर सकेंगे।
- एक सृजनात्मक कार्मिक नीति कैसी होनी चाहिए इसकी विवेचना कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

संगठनात्मक सफलता एवं उसकी प्रभावशीलता एक उत्कृष्ट कार्मिक नीति पर निर्भर करती है। कार्मिक को मानव संसाधन के रूप में देखा जाता है। सरकार की नीतियों के क्रियान्वयन में कार्मिकों की महत्वपूर्ण भूमिका स्वयंसिद्ध है। फलतः मानव साधनों का प्रबन्ध सरकार की प्रबन्ध प्रणाली का एक प्रमुख अंग है। कल्याणकारी शासन व्यवस्थाओं में सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों को प्रभावी तथा मूर्तरूप देने के लिए लोकसेवकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके दृष्टिगत एक उत्कृष्ट कार्मिक नीति आज की आवश्यकता है। इस इकाई में कार्मिक नीति एवं संवैधानिक नीति के अर्थ का विशेषतः भारतीय सन्दर्भ में प्रणयन किया जायेगा। भारत में कार्मिक व्यवस्थापन प्रयोजनार्थ समय–समय पर गठित प्रशासनिक सुधार आयोग के विचारों का उल्लेख करेंगे।

1.2 नीति निर्धारण का अर्थ

'नीति निर्धारण' शब्द पद लोक प्रशासन में अत्यन्त लोकप्रिय है। नीति निर्धारण के अन्तर्गत भविष्य के कार्यरूप के लिए एक रूपरेखा प्रस्तुत की जाती है, जिसमें सर्वश्रेष्ठ साधनों द्वारा लक्ष्यपूर्ति का भाव निहित होता है। नीति निर्धारण से पूर्व आवश्यक है कि सम्पूर्ण तथ्यों, आयामों एवं विकल्पों का मूल्यांकन कर लिया जाय।

1.3 कार्मिक नीति एवं संवैधानिक पर्यावरण

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में उच्च आदर्शों की उद्घोषणा की गयी है। जिसमें नागरिकों को समानता, स्वतन्त्रता तथा बंधुत्व प्रदान करने का आश्वासन दिया गया। मौलिक अधिकारों की व्यवस्था के कारण नागरिकों को सत्तावादी राज्य से व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है। सरकार को नागरिक जीवन के बहुमुखी पहलुओं को आकार देने में अधिक सकारात्मक एवं विशद् भूमिका निभाने का भाव नीति–निदेशक तत्वों में निहित है। भारतीय संवैधानिक मूल्यों ने सरकार पर सम्पूर्ण सामाजिक सरोकारों एवं व्यक्तिगत जीवन को रचनात्मक रूप देने का व्यापक दायित्व डाला है। फलतः कार्मिकों का यह दायित्व है कि संविधान के द्वारा परिभाषित उच्च आदर्शों को प्राप्त करें। कार्मिक नीति ऐसी होनी चाहिए जो कार्मिकों को इन उच्च आदर्शों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करे।

1.4 आधुनिक कार्मिक के उत्तरदायित्व

भारत में प्रशासन से आशय विकास प्रशासन से है। भारतीय प्रशासन का स्वरूप कार्यान्मुखी एवं लक्ष्योन्मुखी है। इस प्रशासन प्रणाली में कर्मचारी एक प्रमुख अंग है एवं यह भारतीय प्रशासनिक प्रणाली का केन्द्र बिन्दु बन गया है। फलतः ऐसा विश्वास प्रकट किया गया कि प्रशासन में काम करने वाले लोग योग्य, प्रभावशाली, व्यावसायिक तथा उनके लिए निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रेरित होने चाहिए। आधुनिक कार्मिक नीति उपर्युक्त वर्णित विचारों को अपने में समाहित करती है। मानव साधनों का नियोजन, संवर्ग प्रबन्ध, कार्य का मूल्यांकन तथा पदों का वर्गीकरण जैसे आधुनिक कार्मिक दायित्वों की पहचान की गयी है। कार्मिक संगठन तथा योग्यता का विकास कार्मिक नीति का प्रमुख विषय बन गया। इसी कड़ी में कार्मिक नीति के निरूपण का स्वतन्त्रता के पश्चात अध्ययन किया गया। कार्मिक प्रणाली की संरचना एवं नियम से सम्बन्धित अनेक पहलुओं की जाँच पड़ताल की गई। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित प्रमुख कमेटियों एवं आयोगों ने समय–समय पर जाँच पड़ताल किया–

1– सचिवालय पुनर्गठन कमेटी (1947)

2– केन्द्रीय वेतन आयोग (1946–47)

3– लोक प्रशासन पर रिपोर्ट (1951)

4– भारत में लोक प्रशासन– सर्वेक्षण की रिपोर्ट (1953)

5– लोक सेवाओं पर रिपोर्ट (1956)

6– दूसरा वेतन आयोग (1957)

7– भ्रष्टाचार रोकने सम्बन्धी कमेटी रिपोर्ट (1964)

8– प्रशासनिक सुधार आयोग (1966–70)

9– तृतीय वेतन आयोग

10– भर्ती नीति तथा चयन विधि (1976)

11– चतुर्थ केन्द्रीय वेतन आयोग रिपोर्ट (1983)

12– नागरिक सेवा परीक्षा योजना पुनरावलोकन समिति (1988–89)

13– पाँचवां वेतन आयोग रिपोर्ट (1994)

14– भारत में नागरिक अधिकार–पत्र (1996)

15– द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (31 अगस्त, 2005)

इन सभी रिपोर्टों ने कार्मिक प्रणाली को प्रभावकारी बनाने के लिए अपना योगदान दिया।

1.5 कार्मिक प्रशासन पर प्रशासनिक सुधार आयोग का दृश्टिकोण

1966 के प्रशासनिक सुधार आयोग ने 20 रिपोर्ट प्रस्तुत किया जिसमें पाँच रिपोर्ट सार्वजनिक कर्मचारियों के

सन्दर्भ में थी–

(1) भारत सरकार की मशीनरी तथा उसकी कार्य प्रक्रिया पर रिपोर्ट

(2) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों पर रिपोर्ट

(3) कार्मिक प्रशासन पर रिपोर्ट

(4) केन्द्र एवं राज्यों के सम्बन्धों पर रिपोर्ट

(5) राज्य प्रशासन पर रिपोर्ट

1.6 कार्मिक विभाग

प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिश पर कार्मिक विभाग स्थापित किया गया। नवीन कार्मिक समस्याओं के समाधान के लिए सरकार ने अगस्त, 1970 में नये कार्मिक विभाग की स्थापना की। देशमुख अध्ययन दल ने भारत सरकार की मशीनरी एवं इसकी कार्य प्रक्रिया पर अध्ययन किया और इसके पश्चात् सुझाव दिया कि प्रभावशाली केन्द्रीय कार्मिक एजेन्सी को आकार दिया जाना चाहिए और कार्मिक प्रशासन सम्बन्धी सम्पूर्ण दायित्व इसे दे दिया जाना चाहिए। इसने कार्मिक क्षेत्र में अभिकरण के नेतृत्व को सशक्त ढंग से स्थापित किए जाने की बात कही। फलतः कार्मिक दायित्व वित्त मंत्रालय एवं संघ लोक सेवा आयोग से कार्मिक विभाग को हस्तान्तरित कर दिये गये। इसके पीछे यह दृष्टिकोण था कि इस विभाग को कार्मिक प्रशासन का एक समेकित संगठन बनाया जा सके। कार्मिक नीति निर्माण के इसी कड़ी में कार्मिक प्रशासन के लिए सलाहकारी परिषद् का गठन किया गया। जिसमें विभाग के एवं विभाग से बाहर के विशेषज्ञ, लोक प्रशासन तथा प्रबन्ध संस्थानों के अनुभवी लोग सम्मिलित थे। इसे नवीनतम कार्य योजनाओं के सन्दर्भ में सलाह देना था।

समयपूर्व सेवानिवृत्ति–

समयपूर्व स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की एक नई योजना बनाई गई। जिसमें पाँच वर्ष का अतिरिक्त सेवा लाभ देकर सरकार के ऐसे अयोग्य कर्मचारियों से छुटकारा पाना था जो क्रियात्मक दृष्टिकोण से सरकार में सुखी नहीं थे।

प्रशासनिक न्यायालय–

प्रशासनिक न्यायालय की स्थापना से प्रशासनिक अधिकारियों को समय शिकायत–संचालन में उत्पीड़न तथा खर्चे के सन्दर्भ में लाभ हुआ है।

संयुक्त परामर्श प्रणाली–

दूसरे वेतन आयोग की अनुशंसा पर आधारित संयुक्त परामर्श प्रणाली से कार्मिक नीति को ठोस आधार प्राप्त हुआ, इसके द्वारा नियोजकों तथा कार्मिकों के मध्य उत्पन्न वाद–विवाद को सुलझाने में सहायता मिली।

1.7 कार्मिक नीति का नवीन नीति परिदृश्य

किसी भी संस्थान में भर्ती से पहले ही कार्मिक प्रबन्ध का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। भर्ती के अन्तर्गत सीधी भर्ती का अनुपात क्या हो, आयु, अनुभव को कितना महत्व दिया जाय। पदोन्नति का मानदण्ड क्या हो, इसके बारे में प्रबन्धकों को पहले निर्णय लेना होता है। संवर्ग का दीर्घकालीन नियोजन (यदि सेवा में पहले से ही संवर्ग प्रणाली है तो) अथवा व्यक्तिगत पदों के निर्धारण करने का कार्य (यदि पहले से ही पद वर्गीकरण प्रणाली मौजूद है तो) प्रारम्भ में ही करने होते हैं। ये बातें समेकित रूप से उचित व्यक्ति को उचित पद पर सही समय पर तथा उचित खर्चे पर रखे जाने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करतीं हैं। लेकिन यह कार्मिक नीति के दृष्टिकोण से दुःखद है कि ऐसे कार्मिक नियमों का पालन नहीं किया जाता है। इसका प्रभाव नकारात्मक पड़ता है, यथा मानव साधनों का प्रभावी प्रयोग नहीं हो पाता है। कार्मिकों को मनोवांछित कार्य–स्थितियाँ नहीं प्राप्त हो पातीं हैं। आज ऐसी कार्मिक नीति की आवश्यकता है जिसमें कर्मचारी कल्याण नीतियों का समावेश हो तथा नियोजक एवं वेतनभोगी के बीच सम्बन्धों को

सुचारु ढंग से चलाने के लिए पृथक नीति का अनुसरण किया जाना चाहिए। कार्मिक नीति की महत्ता इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि सार्वजनिक नीतियों को निष्पादित करने के लिए प्रशासनिक अंगों को योग्य बनाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। किसी प्रशासनिक संगठन की गुणवत्ता, उत्पादकता तथा प्रभावशीलता उसमें कार्य करने वाले कार्मिकों पर निर्भर करती है। उचित रूप से प्रशिक्षित, बुद्धिमान तथा समझदार कार्मिक समूह ही नागरिक केन्द्रित सेवाओं को ठीक ढंग से लागू कर सकते हैं। विश्लेषण के इसी कड़ी में इस तथ्य को रेखांकित करना आवश्यक है कि कोई भी संगठन अपने कार्मिकों की आवश्यकताओं की अवहेलना करके सर्वदा सुखी नहीं रह सकता है। कार्मिक नीति से सम्बद्ध 1964 के संथानम् कमेटी का यहाँ उल्लेख करना स्वाभाविक है। कमेटी ने सिविल सेवकों पर सदैव नजर रखने के लिए एक स्थायी प्रशासनिक शाखा के रूप में केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना के लिए अनुशंसा की। विदित है कि भारत में प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966–70) द्वारा जहाँ लोक सेवाओं के वृत्तिकरण एवं विशेषज्ञता के प्रसार पर बल दिया, वहीं द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने लोक सेवकों को गोपनीयता के स्थान पर पारदर्शिता पर बल दिया है, इसके अन्तर्गत लोक सेवा–मूल्यों का उन्नयन, झूठा दावा, रोकथाम विधि बनाने, सत्यनिष्ठा के अनुकरण करने, विधि–व्यवस्था हेतु शून्य सहिष्णुता नीति को अपनाने पर बल दिया है। मानव श्रम शक्ति अर्थात् कर्मचारी सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। इसीलिए **ई0एन0 ग्लेडन** कहते हैं– ''लोक प्रशासन में कर्मचारी ही मुख्य तत्व हैं।'' क्योंकि संगठनात्मक लक्ष्यों की पूर्ति तथा उस संगठन की छवि उसमें कार्यरत कार्मिकों पर निर्भर करती है।

1.8 सारांश

कार्मिक नीति में केन्द्रीभूत तत्व को अनेक नामों से अभिहित किया गया है, यथा कार्मिक प्रबन्ध, श्रम सम्बन्ध, मानव शक्ति प्रबन्ध तथा श्रम कल्याण प्रबन्ध आदि–आदि। कार्मिक नीति ऐसी होनी चाहिए, जिसमें निम्नलिखित तत्वों पर प्रकाश डाला जाना चाहिए–

- मानव साधनों का प्रभावी प्रयोग सुनिश्चित करना।
- कार्मिकों के सभी सदस्यों को मनोवांछित कार्य–स्थितियाँ उपलब्ध कराना।
- कार्मिकों के उच्चतम विकास का वातावरण निर्मित करना।
- सामाजिक एवं वैधानिक जिम्मेदारियों के निर्वहन के लिए तैयार करना।

उपर्युक्त वर्णित कार्मिक प्रबन्धों में आयोजना, संगठन, निदेशन, समन्वय तथा निमंत्रण पर बल दिया गया है, जो निरापद रूप से कार्मिकों के सहकारी प्रयासों से सम्बन्धित है। कार्मिक नीति के दो पहलू हैं, एक ओर उसे जनमानस की आकांक्षाओं को पूर्ण करना होता है, तथा दूसरी तरफ कर्मचारियों की बढ़ती हुई आशाओं की कसौटी पर खरा उतरना पड़ता है। मानव एक सम्पत्ति है और एक ऐसा साधन है जिस पर प्रशासनिक सफलता निर्भर करती है। आज इस बात की विशेष आवश्यकता है कि मानव साधन कार्मिक नीति में संपूर्ण व्यावसायिकता, तर्कपूर्ण वैज्ञानिक तथा तटस्थ भविष्यवाद से भरे होने चाहिए। आज उत्तरदायी और नागरिक–अनुकूल सरकार एवं सार्वजनिक सेवाओं के प्रदर्शन और सुधार के लिए एक उचित कार्मिक प्रणाली के सर्वदा उपयुक्त नीति के अनुकरण की आवश्यकता है।

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

(1) तर्कसंगत कार्मिक नीति के प्रमुख घटक क्या हैं? स्पष्ट कीजिए।

(2) कार्मिक प्रशासन पर प्रशासनिक सुधार आयोगों के दृष्टिकोण की विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पी प्रश्न :–

(1) कार्मिक विभाग की स्थापना किसके अनुशंसा पर की गयी–

(A) सचिवालय पुनर्गठन कमेटी

(B) प्रशासनिक सुधार आयोग 1966–70

(C) द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग

(D) दूसरा वेतन आयोग

(2) कार्मिक विभाग की स्थापना कब की गई–

(A) सन् 1970

(B) सन् 1971

(C) सन् 1973

(D) सन् 1974

(3) प्रशासनिक सुधार आयोग 1966 ने कुल कितने रिपोर्ट प्रस्तुत किये–

(A) 21

(B) 22

(C) 20

(D) 24

(4) किस आयोग ने गोपनीयता के स्थान पर पारदर्शिता पर बल दिया–

(A) द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग 2005 ने

(B) संस्थानम कमेटी ने

(C) अशोक मेहता कमेटी ने

(D) कोठारी कमेटी ने

(5) समयपूर्व सेवा निवृत्ति निकट से जुड़ा है–

(A) बजट प्रणाली से

(B) कार्मिक नीति से

(C) बजट प्रणाली और कार्मिक नीति दोनों से

(D) इसमें से कोई नहीं

(6) भारत सरकार की मशीनरी एवं इसकी कार्य प्रक्रिया का अध्ययन किया–

(A) होता समिति 2004

(B) अलघ समिति 2001

(C) देशमुख अध्ययन दल

(D) कोठारी समिति

(7) संथानम् समिति सम्बन्धित है–

(A) प्रशासनिक भ्रष्टाचार की समस्या से

(B) केन्द्रीय की सतर्कता आयोग की स्थापना से

(C) (A) और (B) दोनों

(D) इसमें से कोई नहीं

(8) सरकारी कर्मचारियों की शिकायतों के निवारण के लिए प्रशासनिक न्यायाधिकरण के स्थापना की अनुशंसा की–

(A) प्रशासनिक सुधार आयोग 1966

(B) कोठारी समिति

(C) लोक सेवाओं पर रिपोर्ट 1956

(D) दूसरा वेतन आयोग

(9) किसका कथन है कि ''लोक प्रशासन में कर्मचारी ही मुख्य तत्व हैं।''

(A) साइमन का

(B) लुथर गुलिक का

(C) ई0एन0 ग्लैडन का

(D) उर्विक का

(10) शून्य सहिश्णुता नीति को अपनाने पर बल दिया–

(A) द्वितीय प्रशासनिक सुधार अयोग

(B) प्रशासनिक सुधार आयोग 1966

(C) सतीश चंद्र समिति रिपोर्ट

(D) नागरिक अधिकार पत्र 1996

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) B, **(2)** A, **(3)** C, **(4)** A **(5)** B, **(6)** C,
(7) C, **(8)** A **(9)** C, **(10)** A,

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली,
- 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई 02– भर्ती

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 भर्ती का अर्थ

2.3 भर्ती का महत्व

2.4 भर्ती के सन्दर्भ में प्रमुख अवधारणाएँ

2.5 भर्ती की पद्धतियाँ

2.6 भर्ती की शर्तें एवं अर्हताएँ

2.7 योग्यता निश्चित करने के नियम

2.8 भारत में भर्ती पद्धति पर विभिन्न कमेटियों का प्रतिवेदन

2.9 सारांश

2.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

- विभिन्न प्रकार की मानकीय भर्ती नीतियों एवं प्रणालियों की जांच कर सकेंगें।
- कार्मिक प्रबंध नीतियां एवं व्यवहार में भर्ती के अर्थ महत्व एवं आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगें।
- एक श्रेष्ठ भर्ती–नीति के आवश्यक तत्वों की विवेचना कर सकेंगें ।
- विगत वर्षों में अनुकरण में लायी गई तथा वर्तमान में अपनायी जाने वाली भर्ती पद्धति का वर्णन कर सकेंगें।

2.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हम लोगों ने देखा है कि कार्मिक नीति का प्रशासनिक संगठन के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका है। कार्मिक नीति मानव साधनों के नियोजन से जुड़ा हुआ है। इसके अन्तर्गत भर्ती प्रणाली एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसलिए हम भर्ती को संपूर्ण कार्मिक प्रशासन एवं लोक सेवाओं के ढाँचे की आधारशिला कह सकते हैं। योग्यता आधारित निष्पक्ष तथा व्यवहारिक भर्ती प्रणाली की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है। भर्ती आवेशन विध्यात्मक भर्ती प्रतिभा की खोज चयन प्रक्रिया आदि पर विचार करना लोक प्रशासन विषय के लिए आवश्यक है।

2.2 भर्ती का अर्थ

किसी संगठन में खाली पदों को भरना ही भर्ती है। भर्ती का तात्पर्य लोक सेवकों की भर्ती से है। भर्ती का आशय सार्वजनिक सेवाओं में कार्मिकों के चयन से है। किसी संगठन में भर्ती एवं चयन कर्मचारियों संबंधी आधारभूत काम हैं। संगठन को कर्मचारियों का समुच्चय उपलब्ध कराने की प्रक्रिया के लिए इन दो शब्दों (भर्ती तथा चयन) का प्रायः एक साथ प्रयोग किया जाता है। तर्कपूर्ण दृष्टि से ये दो शब्द एक ही प्रक्रिया के दो भिन्न चरण है। डी0 **ई0 क्लिंगर** के शब्दों में भर्ती योग्यता प्राप्त आवेदकों को आकर्षित करने की प्रक्रिया है। कहने का भाव यह है कि भर्ती में श्रम बाजार से सम्पर्क होता है। परिणामतः यह आवेदकों का एक समूह उपलब्ध कराती है। आवेदकों का

परीक्षण किया जाता है जिससे सूची को छोटा करते–करते कुछेक उपयुक्त अभ्यर्थियों तक सीमित कर दिया जाता है। **मार्शल डिमॉक** के द्वारा की गई परिभाषा के अनुसार– ''विशिष्ट कार्यों के लिए व्यक्तियों को प्राप्त करना और बड़े समूह के लिए विज्ञापन निकालना या विशेष कार्य के लिए उच्च कौशल युक्त व्यक्तियों की खोज करना ही भर्ती है।'' अतएव भर्ती योग्य व्यक्तियों को संगठन की ओर आकर्षित करने एवं उनका चयन करने की प्रक्रिया को कहते हैं। इसमें पदों का आकलन, योग्यता का निर्धारण, विज्ञापन, आवेदन, पत्रों की छंटनी, प्रतियोगी परीक्षा का आयोजन, साक्षात्कार तथा योग्य अभ्यर्थियों का चयन एवं उनकी नियुक्ति की अनुशंसा के चरण सम्मिलित हैं।

2.3 भर्ती का महत्व

भर्ती की प्रक्रिया का संपूर्ण प्रशासकीय प्रणाली की दृष्टि से विशेष महत्व हैं। भर्ती द्वारा लोक सेवाओं का स्तर तथा योग्यता निश्चित होती है। भर्ती की प्रक्रिया ही शक्तिशाली लोक सेवा की कुंजी है, जैसा कि स्टाल महोदय का कथन है कि ''यह सम्पूर्ण लोक कर्मचारियों के ढाँचे की आधारशिला है।'' भर्ती की त्रुटिपूर्ण नीति के कारण प्रशासन में स्थायी दुर्बलता आ जाती है। फलतः उत्कृष्ट भर्ती की नीति की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है। विदित है कि भर्ती के क्षेत्र में लोक प्रशासन निजी प्रशासन से बहुत अलग है। लोक प्रशासन में भर्ती नीति का निर्धारण संवैधानिक जरूरतों एवं राजनीतिक दृष्टिकोण से किया जाता है। निजी प्रशासन इस प्रकार की सीमाओं से मुक्त है। आधुनिक काल में प्रशा सबसे पहला देश है जिसने ठोस भर्ती प्रणाली का विकास किया था। इसी कड़ी में उल्लेखनीय है, भारत में योग्यता सिद्धान्त 1853 से ही चला आ रहा है। ब्रिटेन में इसे 1857 में स्वीकार किया गया था। अमरीका ने योग्यता सिद्धान्त को 1883 में शुरू किया। ब्रिटेन के नार्थकोट–ट्रेवेलियन रिपोर्ट जो 1853 में प्रकाशित हुई थी। इस रिपोर्ट में खुली प्रतियोगिता द्वारा योग्यता–प्रणाली को स्वीकार करने की अनुशंसा की गयी थी। इसी प्रकार अमरीका में 'पेण्डलेटन अधिनियम 1883' में पारित किया गया, जिसके फलस्वरूप अमेरिका में प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से भर्ती का प्रावधान किया गया। इस प्रकार भर्ती के योग्यता सिद्धान्त ने लूट सिद्धान्त का स्थान ले लिया है।

2.4 भर्ती के सन्दर्भ में प्रमुख अवधारणाएँ

किसी विचार को स्पष्ट करने वाली व्याख्या अवधारणा कहलाती है भर्ती के संबंध में दो अवधारणाएँ प्रचलित हैं–

- नकारात्मक अवधारणा तथा
- सकारात्मक अवधारणा

भर्ती की नकारात्मक अवधारणा में भर्तीकर्ता अभिकरण तथा निर्णयकर्ता मुख्यतः धूर्त एवं कुटिल व्यक्तियों को संगठन से बाहर रखने का प्रयत्न करते हैं। पूर्व में प्रचलित लूट प्रणाली से भर्ती करने वाली सत्ता अपने परिचितों को नौकरी प्रदान किया करती थी। इसमें योग्यता के मानदण्ड की अवहेलना होती थी। लूट प्रणाली के उपरान्त योग्यता आधारित भर्ति की शुरुआत हुई जिसमें अयोग्य, धूर्त तथा कुटिल व्यक्तियों को संगठन से बाहर रखने पर जोर दिया गया। नकारात्मक अवधारणा में सबसे पहले सभी अभ्यर्थियों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। साररूप में कहें तो इसमें व्यक्ति के गुणों को परखने से पूर्व उसके अवगुणों का पहले अन्वेषण किया जाता है। पदों की सीमित संख्या एवं उम्मीदवारों की अधिकता के कारण नकारात्मक अवधारणा को अपनाया गया है। भर्ती के सकारात्मक अवधारणा में समस्त अभ्यर्थियों को योग्य मानते हुए उनमें से ज्यादा योग्य को खोजा जाता है। सकारात्मक अवधारणा के क्रियान्वयन में अत्यन्त आकर्षक तरीके से विज्ञापन जारी करके योग्य व्यक्तियों को संगठन की ओर बुलाया जाता है। योग्यता की परख वैज्ञानिक पद्धति तथा परीक्षणों द्वारा किया जाता है। योग्य एवं कार्यकुशल उम्मीदवारों का चयन किया जाता है। आधुनिक लोक सेवाओं में भर्ती की सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही प्रकार की अवधारणाएँ प्रचलित हैं।

2.5 भर्ती की पद्धतियां

लोक सेवाओं में भर्ती की तीन पद्धतियां लागू है ।

1– बाहरी या प्रत्यक्ष भर्ती

2– आन्तरिक या अप्रत्यक्ष भर्ती

3– प्रतिनियुक्ति से भर्ती

(1) बाहरी या प्रत्यक्ष भर्ती – जब किसी पद के लिए खुले या उन्मुक्त रूप से योग्य अधिकारियों से आवेदन मांगे जाते हैं और भर्ती की जाती है तो यह योग्यता आधारित बाहरी या अप्रत्यक्ष भर्ती कहलाती है। यही सच्चे अर्थों में भर्ती हैं।

(2) आन्तरिक या अप्रत्यक्ष भर्ती – जब किसी विभाग में उच्च पद पर निम्न पद धारक कार्मिकों को पदोन्नति किया जाता है तो इसे आन्तरिक या अप्रत्यक्ष भर्ती कहते हैं। इस सन्दर्भ में विस्तार से विवेचन एवं विश्लेषण इकाई–03 में किया गया है।

(3) प्रतिनियुक्ति से भर्ती – इस प्रणाली में किसी पद पर दूसरी सेवाओं से किसी अधिकारी को प्रतिनियुक्ति पर पदासीन कर दिया जाता है। वर्तमान में यह प्रणाली अतिरिक्त प्रभार के नाम से अस्थायी रूप से बहुत से जगहों पर लागू है।

प्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली के लाभ :–

यह परिपाटी प्रजातंत्र के सिद्धान्त के अनुरूप है। यह अभ्यर्थियों के लिए सामान अवसर प्रदान करती है। यह भेदभाव रहित है। सरकार योग्य युवकों को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। अतएव प्रत्येक स्तर पर नए एवं प्रतिभाशाली अभ्यर्थी उपलब्ध हो सकते हैं। प्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली योग्य तथा कुशल नवयुवकों की सेवाएँ प्राप्त करने की सरकार को अवसर प्रदान करती है। इसमें अभ्यर्थी अपनी योग्यता एवं क्षमता में वृद्धि के लिए कठिन प्रयत्न करते हैं। प्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली ऊर्जावान एवं विभिन्न अनुशासनों में शिक्षित नवयुवकों को सरकारी सेवा में प्रवेश का अवसर प्रदान करती है। जिससे देश के परिवर्तित हो रहे सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल लोक सेवाएँ बनी रहें।

प्रत्यक्ष भर्ती के दोष :–

प्रत्यक्ष या बाहर से भर्ती पद्धति में कुछ दोष के दिखाई देते हैं। सेवा के उच्च पदों पर अनुभवहीन व्यक्ति नियुक्ति पा जाते हैं, जो विभाग के जटिल कार्यों को सुचारु रुप से सम्पन्न नहीं कर पाते। प्रत्यक्ष भर्ती के कारण पहले से कार्यरत सेविवर्ग को पर्याप्त पदोन्नति के अवसर नहीं मिल पाते। प्रत्येक भर्ती से नियुक्त कर्मचारियों को विभागीय कार्यसंस्कृति का ज्ञान नहीं होता है, इन्हें प्रशिक्षण द्वारा ज्ञान कराया जाता है। अतएव इससे सरकार पर अतिरिक्त व्यय का भार पड़ता है।

आन्तरिक या अप्रत्यक्ष भर्ती के लाभ :–

इस प्रणाली के अन्तर्गत जिन कर्मचारियों को पदोन्नति दी जाती है, जिसके फलस्वरूप उन्हें उच्च स्तरीय पदों पर नियुक्त किया जाता है, उन्हें पहले से सरकारी कार्य का पर्याप्त अनुभव होता है। इसमें सरकार का प्रशिक्षण के मद में कोई खर्च नहीं आता। अतः अप्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली कम खर्चीली है। इस प्रणाली में अनुभवी तथा कर्मशील व्यक्ति स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। योग्यता का निर्धारण कार्मिक के निष्पादन क्षमता के आधार पर होता है, जिससे संगठन की गुणवत्ता बनी रहती है। अप्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली से कार्मिकों को अभिप्रेरणा तथा सन्तुष्टि मिलती है।

अप्रत्यक्ष भर्ती के प्रमुख दोष :–

पहले से सेवा में कार्यरत कार्मिकों में से ही योग्य लोगों पदोन्नति देकर भर्ती करना होता है। अतः इसका क्षेत्र सीमित होता है। पदोन्नति व्यवस्था के कारण अनेक कर्मचारी अकर्मण्य तथा परिवर्तन विरोधी हो जाते हैं। साधारण योग्यता वाला कार्मिक भी उच्च पद पर आसीन हो जाता है। पदोन्नति प्राप्त कार्मिक में नवाचार को लेकर उत्साह नहीं पाया जाता है। यह अलोकतांत्रिक प्रणाली है तथा नवीन ज्ञान व दृष्टि का समावेश नहीं करती है।

भर्ती के दोनों प्रणालियों के वर्णन के फलस्वरुप हम कह सकते हैं, शासकीय कर्मचारियों के भर्ती के लिए

दोनों में से केवल किसी एक प्रणाली को ही स्वीकार नहीं किया जा सकता है। व्यवहार में भर्ती के लिए कुछ कम और कुछ अधिक अनुपात में दोनों ही पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है, जिसके परिणाम श्रेयस्कर होते हैं।

2.6 भर्ती की शर्तें एवं अर्हताएँ

बाहरी (प्रत्यक्ष) तथा भीतरी (अप्रत्यक्ष) दोनों ही प्रकार की भर्ती प्रणालियों में कुछ नियम एवं शर्तें निर्धारित कर दी जाती हैं, जिनका अनुकरण करना अनिवार्य होता है। पदोन्नति (आन्तरिक) भर्ती हेतु निर्धारित शर्तें विभागीय जरूरतों के अनुरूप होती है प्रत्यक्ष या खुली भर्ती की शर्तें अधिक व्यापक तथा बहुआयामी होती हैं। लोक सेवाओं में प्रवेश के लिए प्रायः निम्नलिखित आर्हताएँ पूर्ण किया जाना आवश्यक हैं–

(1) **नागरिकता**– दुनिया के अधिकांश देश अपने नागरिकों को ही सेवाओं में भर्ती करते हैं। यदि कोई भी विदेशी नियुक्त कर भी लिया जाता है तो उसका कार्यकाल अल्प समय के लिए ही होता है लेकिन ऐसा भी होता है कई बार नियुक्तिकर्ता देश लोक सेवक को नागरिकता भी प्रदान कर देते हैं। अमेरिका तथा कनाडा में लाखों भारतीयों को यहाँ की नागरिकता नागरिक सेवा के लिए मिल चुकी है।

(2) **अधिवास या निवास**– भारत सहित अधिकांश भौगोलिक रूप से विस्तृत देशों में स्थानीय निवास भी लोक सेवकों के लिए अर्हता माना गया है। लोक सेवकों से अपेक्षा की जाती है कि वह स्थानीय भाषा, संस्कृति तथा क्षेत्र की जानकारी रखें। सन् 1957 से पूर्व तक अधिकांश पदों पर भर्ती हेतु अधिवास संबंधित नियम प्रभावी थे, अर्थात स्थानीय नागरिक की भर्ती के लिए पात्र थे। इसी क्रम में उल्लेखनीय है राज्य पुनर्गठन आयोग ने अधिवास संबंधी अर्हता को समानता के अधिकार के विपरीत बताया। आयोग के विचार को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने जन रोजगार अधिनियम 1957 पारित किया तथा अधिकांश पदों पर अधिवास की शर्त को समाप्त कर दिया, किन्तु संविधान के अनुच्छेद 16(3) में यह व्यवस्था है कि तर्कपूर्ण कारणों के आधार पर प्रान्त के निवासियों को ही अधिवास के आधार पर कुछ पदों पर नियुक्त किया जा सकता है। इसके लिए प्रान्त की व्यवस्थापिका द्वारा विधि बनाया जा सकता है।

(3) **लिंग**– भारत के संविधान में लैंगिक भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं है। आज लोक सेवाओं में भर्ती होने के लिए महिलाओं और पुरुषों को समान अवसर प्राप्त है। अब सैन्य क्षेत्र व वैमानिक सेवाओं में भी महिलाओं की भर्ती अधिकारियों के रूप में हो रहा है। वर्तमान में लिंग के आधार पर लोक सेवाओं में भर्ती के लिए किसी भी तरह का भेद–भाव नहीं किया जा रहा है।

(4) **आयु**– आज का ज्ञान अभिवृत्ति तथा मानसिकता से सीधा सम्बन्ध है। अतएव आयु सीमा का निर्धारण पद की योग्यता एवं आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। संघ लोक सेवा आयोग के परीक्षा द्वारा भर्ती होने की आयु सीमा उम्मीदवार की न्यूनतम आयु 21 वर्ष और अधिकतम आयु 32 वर्ष होनी चाहिए। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा द्वारा भर्ती होने की आयु सीमा न्यूनतम आयु 21 वर्ष और अधिकतम आयु 40 वर्ष है।

(5) **शिक्षा सम्बन्धी अहताए**– इस संबंध में दो प्रकार की नीतियाँ प्रचलित हैं। ब्रिटिश प्रणाली के प्रतिमान में निश्चित शिक्षा संबंधित योग्यताएँ तथा आयु सीमा निर्धारित की गयी हैं। अमरीकी प्रतिमान में ऐसी प्रणाली को लागू किया गया है जिसमें न्यूनतम शिक्षा संबंधित अर्हता तथा आयु की सीमा निर्धारित नहीं है। अर्थात् अमेरिका में व्यक्ति की आयु कुछ भी हो प्रतियोगिता परीक्षा में सफल होने के पश्चात् लोक सेवा में प्रवेश पा सकता है। भारतीय प्रणाली पर ब्रिटिश प्रशासकीय विरासत की छाप है। प्रशासकीय सेवाओं में भर्ती के लिए भारत में अनिवार्य न्यूनतम योग्यता, कला, विज्ञान, तकनीकी प्रबंध या चिकित्सा विज्ञान विषयों में विश्वविद्यालय की स्नातक उपाधि होती है। लिपिक सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए न्यूनतम योग्यता 2010 से 12वीं या उसके समकक्ष योग्यता निर्धारित है।

(6) **शारीरिक या मानसिक योग्यताएँ**– लोक सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए अभ्यर्थी का शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक है। पुलिस विभाग या इसी प्रकार के अन्य विभाग में भर्ती हेतु लंबाई, वजन, सीना माप एवं अन्य शारीरिक क्षमता का निर्धारण किया गया है। लोक सेवा के अन्य विभागों में अधिकांश पदों पर सामान्य शारीरिक संरचना वाला अभ्यर्थी उपयुक्त समझा जाता है। विदित हो कि

लोक सेवा में भर्ती होते समय प्राधिकृत चिकित्सा बोर्ड से परीक्षण करवाकर स्वास्थ्य प्रमाण पत्र प्राप्त करके नियोक्ता के समक्ष प्रस्तुत करना अनिवार्य है।

(7) अनुभव एवं विशिष्ट योग्यताए—अमेरिका में लोक सेवाओं में किसी भी आयु में प्रवेश किया जा सकता है। यहाँ कार्य के वास्तविक अनुभव का अत्यन्त महत्व है। भारतीय लोक सेवा प्रणाली में विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त युवकों की भर्ती की जाती है तथा साथ ही उच्च तथा तकनीकी प्रकृति के पद पर भर्ती के समय कुछ वर्षों का अनुभव जरूरी माना गया है।

(8) चरित्र— लोक सेवाओं में भर्ती होने वाले व्यक्तियों का चरित्र उजला और विश्वसनीय होना चाहिए। सरकारी सेवाओं में नियुक्त होने वाले अभ्यर्थियों का शासन द्वारा पुलिस—सत्यापन करवाया जाता है जिससे अच्छे चरित्र की पुष्टि हो सके।

2.7 योग्यता निश्चित करने के नियम

प्रशासकीय तथा कार्यपालक सेवाओं के लिए प्रत्येक भर्ती संघ लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर सम्पन्न होती है। अनुच्छेद—315 के अनुसार संघ लोक सेवा आयोग उच्च लोक सेवकों की भर्ती करता है। संघ लोक सेवा आयोग सैनिक तथा लोक सेवा दोनों प्रकार की सेवाओं के लिए भर्ती प्रक्रिया का सम्पादन करता है, इसमें आगे वर्णित तथ्य शामिल है—

- कुछ विषयों में लिखित परीक्षा द्वारा बौद्धिक योग्यता का परीक्षण किया जाता है।
- सामान्य ज्ञान अनिवार्य लिखित प्रश्न—पत्र द्वारा प्रभावशाली चिंतन वैचारिक क्षमता विचारों एवं भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति को रखा जाता है।
- अभ्यर्थी के व्यक्तिगत गुणों एवं बौद्धिक क्षमता का परीक्षण साक्षात्कार द्वारा किया जाता है।

2.8 भारत में भर्ती पद्धति पर विभिन्न समितियों का प्रतिवेदन

जिनकी आकांक्षा सिविल सेवक बनने की होती है, उनके पास न केवल अपेक्षित कौशल और ज्ञान अपितु सभी मूल्य भी होने चाहिए। जिनमें इमानदारी लोकसेवा की प्रतिबद्धता सहित संविधान में अंकित आदर्शों और दर्शन के प्रति प्रतिबद्धता शामिल है फलतः भर्ती प्रक्रिया पारदर्शी, उद्देश्यपूर्ण, निष्पक्ष तथा न्यायपूर्ण होनी चाहिए, साथ ही यह भी सुनिश्चित होना चाहिए कि सही किस्म के व्यक्ति सिविल सेवाओं में शामिल हों। भर्ती प्रणाली के विकास के क्रम में विभिन्न पहलुओं के सन्दर्भ में सिफारिशें देने के लिए बहुत से आयोग और समितियाँ गठित की गईं। इनकी अनुशंसायें लोक प्रशासन के सन्दर्भ में ए0डी0 गोरवाला की रिपोर्ट, 1951 लोक सेवाएँ (भर्ती के लिए अर्हताएँ) समिति की रिपोर्ट, 1956 (रामास्वामी मुदालियर समिति रिपोर्ट), भारती और राज्य प्रशासनिक सेवाओं और जिला प्रशासन की समस्याओं के बारे में वी0टी0 कृष्णामाचारी की रिपोर्ट 1962, कार्मिक प्रशासन के बारे में प्रशासनिक सुधार आयोग की रिपोर्ट 1969, भर्ती नीति और चयन के पद्धति से सम्बद्ध समिति की रिपोर्ट, 1976 (कोठारी समिति रिपोर्ट), सिविल सेवा परीक्षा की स्कीम की समीक्षा करने वाली समिति की रिपोर्ट, 1989 (सतीश चंद्र समिति रिपोर्ट), सिविल सेवा परीक्षा सीमित रिपोर्ट 2001 (योगिन्द्र के0 अलघ सीमित रिपोर्ट), सिविल सेवा सुधार समिति की रिपोर्ट (होता समिति रिपोर्ट 2004) में शामिल हैं।

ए0डी0 गोरवाला की रिपोर्ट 1951 में अनुशंसा की गई थी कि सरकारी सेवा के सभी ग्रेडों में भर्ती इस पद्धति से की जानी चाहिए, जो संरक्षण की संभावना का उन्मूलन कर दे। डॉ0ए0 रामास्वामी मुदालियर की रिपोर्ट, 1956 में यह सिफारिश की गई थी कि उच्चतर सेवाओं में भर्ती के लिए न्यूनतम योग्यता विश्वविद्यालय की डिग्री होनी चाहिए। इसी क्रम में इस आयोग ने कहा कि सचिवालीय और लिपिकीय सेवाओं के लिए विश्वविद्यालय की डिग्री पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए। इस समिति ने यह सिफारिश भी की थी की उच्चस्तरीय कार्यकारी और प्रशासनिक सेवाओं के लिए आयु सीमा 21—23 वर्षों के मध्य निश्चित की जानी चाहिए।

पहले प्रशासनिक सुधार आयोग ने अनुशंसा की थी कि आई0ए0एस0/आई0एफ0एस0 एवं अन्य गैर तकनीकी श्रेणी 1 सेवाओं के लिये भर्ती केवल एकल प्रतियोगी परीक्षा के माध्यम से की जानी चाहिए एवं परीक्षा के लिए उच्च आयु सीमा बढ़ाकर 26 वर्ष कर दी जानी चाहिए। डी0एस0 कोठारी समिति रिपोर्ट, 1976 में दो प्रक्रमों वाली परीक्षा प्रणाली की अनुशंसा की गई थी। प्रारम्भिक और उसके पश्चात् मुख्य परीक्षा।

सिविल सेवा परीक्षा समीक्षा समिति (अलघ समिति) 2001 ने रिपोर्ट में योग्य एवं कुशाग्र बुद्धि अभ्यर्थियों की परख के लिए सही पद्धति लागू करने की सलाह दी। समिति ने आगे कहा है कि उम्मीदवारों की परीक्षा वैकल्पिक विषयों में लिए जाने की बजाए एक सामान्य विषय में ली जानी चाहिए। इसी क्रम में होता समिति रिपोर्ट, 2004 ने सिफारिश की थी कि उच्चतर सिविल सेवाओं में सामान्य श्रेणी के उम्मीदवार की आयु 21 से 24 वर्ष की जानी चाहिए, साथ ही अनुसूचित जातियों अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए आयु में 5 वर्षों की और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 3 वर्षों की छूट होनी चाहिए। सिविल सेवा परीक्षा की नवीन प्रणाली–2013 CSAT के द्वारा लोक सेवाओं की भर्ती प्रणाली में सुधार किया गया। वर्ष 2011 से केवल 'प्रारम्भिक परीक्षा' के स्तर में ही बदलाव किया गया है। 'मुख्य परीक्षा' एवं 'साक्षात्कार' के स्तर पर नया 'विस्तृत बदलाव' 2013 को लागू किया गया है।

2.9 सारांश

कार्मिक प्रशासन का एक प्रमुख दायित्व भर्ती से संबंधित है। कार्मिक प्रशासन में भर्ती प्रारंभिक बिंदु है एवं इसी पर लोकसेवा का संगठन निर्भर करता है। जब तक आधारभूत सामग्री उपयुक्त न हो तब तक अच्छे प्रशिक्षण, निरीक्षण और वर्गीकरण जैसी प्रक्रियाओं का महत्व नहीं है। परिणामतः भर्ती प्रक्रिया का अत्यन्त महत्त्व है, देश काल एवं परिस्थितियों के अनुरूप भर्ती की अवधारणाओं, पद्धतियों एवं प्रविधि में परिवर्तन आया है। भर्ती की एक तर्कयुक्त आदर्श प्रणाली का होना कुशल नागरिक प्रशासन की आवश्यक शर्त है। किसी संगठन की गुणवत्ता, उत्पादकता तथा प्रभावकारिता उसमें रहने वाले कार्मिकों पर निर्भर करती है। फलतः भर्ती की तर्कपूर्ण वैज्ञानिक आदर्श प्रणाली का होना अत्यन्त आवश्यक है, भर्ती प्रणाली में गतिशीलता होनी चाहिए जिससे शैक्षिक तथा तकनीकी योग्यताएँ एवं व्यक्तिगत क्षमता का समावेश हो सके। निष्पक्षता के साथ योग्यता प्रणाली पर बल दिया जाना चाहिए। सत्यनिष्ठा और विशेषज्ञतापूर्ण तत्वों का भर्ती प्रणाली में होना अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि समय के साथ लोक सेवाओं की गुणवत्ता के लिए नवीन रीतियुक्त पद्धति अनुकरणीय है।

2.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. भर्ती के अर्थ महत्त्व तथा इस के सन्दर्भ में प्रचलित अवधारणाओं को स्पष्ट कीजिए।
2. भीतर से भर्ती बनाम बाहर से भर्ती से आप क्या समझते हैं? विवेचना कीजिए।
3. प्रत्यक्ष भर्ती प्रणाली क्या है? इसके गुण एवं दोषों को स्पष्ट कीजिए।
4. भारत में भर्ती पद्धति पर विभिन्न समितियों के मुख्य सिफारिशों की समीक्षा कीजिए।
5. भर्ती के सन्दर्भ में प्रमुख शर्तों एवं अर्हताओं की विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) भारत में भर्ती के लिए योग्यता सिद्धान्त को कब अपनाया गया ?

(A) सन् 1883

(B) सन् 1857

(C) सन् 1853

(D) सन् 1871

(2) अमरीका में योग्यता सिद्धान्त से सम्बन्धित 'पेण्डलटन अधिनियम' कब पारित किया गया ?

(A) सन् 1883 में

(B) सन् 1853

(C) सन् 1882

(D) सन् 1881

(3) भर्ती का 'लूट सिद्धान्त' किस देश में प्रचलित था ?

(A) ब्रिटेन

(B) अमरीका

(C) फ्रांस

(D) भारत

(4) किस समिति ने सिफारिश किया कि उच्चतर सिविल सेवाओं क लिए आयु 21 से 24 वर्श होनी चाहिए ?

(A) कोठारी समिति

(B) गोरवाला समिति

(C) होता समिति 2004

(D) अलघ समिति

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) C **(2)** A **(3)** B **(4)** C

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई – 03 पदोन्नति

इकाई की रूप रेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 परिचय

3.2 पदोन्नति का अर्थ या आशय

3.3 पदोन्नति का महत्व

3.4 नागरिक/सार्वजनिक सेवाओं में पदोन्नति प्रणाली की आवश्यकता

3.5 पदोन्नति के प्रकार

3.6 पदोन्नति के प्रचलित प्रमुख सिद्धान्त

3.7 पदोन्नति हेतु योग्यता की परीक्षण विधियाँ

3.8 श्रेष्ठ पदोन्नति नीति के आवश्यक तत्व

3.9 भारत में प्रयुक्त पदोन्नति पद्धति

3.10 सारांश

3.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- कार्मिक प्रशासन के अन्तर्गत पदोन्नति के आशय महत्व एवं आवश्यकता से अवगत होंगे।
- पदोन्नति सिद्धान्त यथा प्रचलित अर्हता–सिद्धान्त बनाम वरिष्ठता सिद्धान्त के प्रकार एवं पद्धतियों की विवेचना कर सकेंगें।
- सुशासन के युग में एक उत्कृष्ट पदोन्नति–नीति की विवेचना कर सकेंगें।
- यह समझ सकेंगें कि वर्तमान समय में जनोन्मुख एवं सुव्यवस्थित प्रशासनिक तंत्र के लिए कौन सी पदोन्नति पद्धति का अनुसरण किया जा रहा है। इसकी व्याख्या कर सकेंगें।

3.1 परिचय

विगत इकाई के अध्ययन के उपरान्त हम देख चुके हैं कि सरकारी सेवाओं में रिक्त पदों को दो प्रकार से भरा जा सकता है– वाह्य (बाहरी) अभ्यर्थियों के प्रत्यक्ष भर्ती के द्वारा तथा दूसरा पूर्व से ही सेवारत कार्मिकों की पदोन्नति के माध्यम से अप्रत्यक्ष भर्ती के द्वारा। वस्तुतः भर्ती करने के अप्रत्यक्ष विधि को पदोन्नति पद्धति कहा जाता है। सामान्यतः विश्व के सभी राष्ट्रों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रणालियों को अपनाया गया है। फलतः दुनिया की सभी सरकारें सेविवर्ग संबंधी अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए दोनों भर्ती की रितियों का सहारा लेती हैं। भारतीय प्रशासन में भी सेविवर्ग के लिए पदोन्नति जीवन–वृत्ति सेवा का अनिवार्य अंग है। अर्हता–सिद्धान्त और वरिष्ठता सिद्धान्त ये दो मुख्य सिद्धान्त है, जिन्हें पदोन्नति के लिए अपनाया जाता है। दोनों सिद्धान्तों के विश्लेषण के उपरान्त यह ज्ञात होता है कि इसके कुछ सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्ष भी है। अर्हता–सिद्धान्त का वरिष्ठता सिद्धान्त के साथ समन्वय करके पदोन्नति के सर्वोत्तम विधि की स्थापना की जा सकती है। भारतीय प्रशासन के प्रारंभ में वरिष्ठता के सिद्धान्त को ही पदोन्नति के लिए विशेष महत्व प्राप्त था, किंतु बाद में अर्हता–सिद्धान्त को भी पदोन्नति के लिए अपनाया गया। सुशासन एवं भारत में नागरिक अधिकार–पत्र लागू होने के काल में वरिष्ठता के

साथ–साथ अर्हता–सिद्धान्त को अपनाए जाने पर बल दिया जा रहा है।

3.2 पदोन्नति का अर्थ या आशय

पदोन्नति का अनुशासनिक विषयपरक अर्थ पहले से ही सेवा में कार्यरत लोगों में से योग्य एवं प्रतिभायुक्त लोगों के चयन द्वारा उच्च स्तर पर रिक्त पदों को भरना है। एल0डी0 व्हाइट के शब्दों में ''पदोन्नति का अर्थ है एक दिए हुए पद से किसी अधिक कठिन प्रकार के कार्य पर नियुक्ति और अधिक उत्तरदायित्व। इसके साथ पद के नाम में परिवर्तन और सामान्यतः वेतन में वृद्धि।'' पदोन्नति का आशय पदनाम एवं वेतनमान दोनों में ही परिवर्तन से है। 'पदोन्नति' शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द प्रमोट का पर्यायवाची है, जबकि आंग्ल भाषी शब्द 'प्रमोट' लैटिन भाषा के शब्द प्रिमोवीर से लिया गया है जिसका अर्थ है आगे बढ़ना। फलतः पदोन्नति पद स्तर तथा सम्मान में वृद्धि करने या योग्यता के आधार पर आगे बढ़ने से जुड़ा है।

पदोन्नति = आन्तरिक भर्ती या अप्रत्यक्ष भर्ती।

पदोन्नति = निम्न पद से उच्च पद की ओर प्रगति + फलतः कर्तव्यों में परिवर्तन।

एक अन्य तथ्य महत्वपूर्ण है कि पदोन्नति विभागीय होती है। अर्थात एक विभाग में उच्च पद रिक्त होने पर उसकी पूर्ति प्रायः उसी विभाग के निम्न स्तरीय कर्मचारियों को पदोन्नति करके की जाती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं की पुलिस विभाग की सेवा में कार्य करने वाले व्यक्ति की पदोन्नति शिक्षा विभाग अथवा स्वास्थ्य सेवा विभाग में नहीं हो सकती है। फलतः उपर्युक्त वर्णन के आधार पर कह सकते है कि पदोन्नति का अर्थ है– एक निम्न–स्तर पद से उस उच्चतर पद पर नियुक्ति साथ ही कर्तव्यों एवं दायित्वों में वृद्धि एवं पहले के वेतनमान से उच्चतर वेतनमान में प्रवेश करना है। हमें इस तथ्य से भी अवगत होना चाहिए कि सामान पद वाली सेवा में एक पदनाम से दूसरे पदनाम पर स्थान्तरण को पदोन्नति नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार एक वर्ष ठीक से पूर्ण होने पर कर्मचारी अपनी वार्षिक वृद्धि प्राप्त कर लेता है जो उसके वेतनमान में निर्धारित की गई होती है यह पदोन्नति नहीं है। पदोन्नति का अर्थ पदनाम एवं वेतनमान दोनों में ही परिवर्तन से लिया जाता है।

3.3 पदोन्नति का महत्व

पदोन्नति की एक उचित व्यवस्था योग्य व्यक्तियों को सार्वजनिक सेवाओं की तरफ आकर्षित करने तथा निजी सेवाओं की ओर जाने से रोकने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। पदोन्नति व्यवस्था की कमी आकांक्षी एवं सुयोग्य कार्मिकों को सार्वजनिक सेवाओं से दूर रखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। इसके अभाव में अनुशासन स्थापित करना कठिन हो जाता है। एक उत्कृष्ट पदोन्नति व्यवस्था सेवी वर्ग में कार्य के प्रति रुचि पैदा कर देती है और एक लगातार प्रभावशाली प्रेरक का कार्य करती है। सरकारी सेवी वर्ग (कर्मचारी वर्ग) के निष्ठापूर्वक तथा कठिन परिश्रम से कार्य करने के लिए पदोन्नति एक पुरस्कार के रूप में दी जाती है। पदोन्नति के अभाव में सिविल सेवा को जीवन–वृत्ति सेवा नहीं कहा जा सकता है। सर्वोत्तम प्रतिभाशाली लोग पदोन्नति के पुरस्कार व्यवस्था के परिणामस्वरूप ही सार्वजनिक सेवाओं की ओर आकर्षित होते हैं। पदोन्नति के द्वारा देश को कार्यकुशल, योग्य एवं सन्तुष्ट कर्मचारी वर्ग प्राप्त होते हैं। यह सार्वजनिक सेवा में संलग्न सेवीवर्ग में नैतिकता का भी संचार करता है।

3.4 सार्वजनिक सेवाओं/नागरिक सेवा में पदोन्नति की आवश्यकता

पदोन्नति व्यवस्था स्वस्थ नियमों पर आधारित होनी चाहिए। एक त्रुटिपूर्ण पदोन्नति व्यवस्था ना केवल अयोग्य व्यक्तियों को आगे धकेलकर अपितु समस्त सेवीवर्ग के साहस का अवमूल्यन करके सेवाओं को हानि पहुँचाती है। एक उत्कृष्ट पदोन्नति व्यवस्था का प्रभाव सर्वव्यापी होता है। इसके माध्यम से सिविल सेवा आकर्षक सेवा बन सकती है एवं श्रेष्ठ प्रतिभाशाली लोगों को इस सेवा में आने के लिए आकर्षित कर सकती है। यहाँ **डब्ल्यू0 एफ0 विलोबी** के तर्कपूर्ण पदोन्नति प्रणाली के कुछ शर्तों का उल्लेख करना समीचीन है–

(1) नागरिक सेवाओं में प्रमाणिक विशेष लक्ष्य स्वीकारना, कर्तव्यों तथा योग्यताओं को निर्धारित करना जो सभी प्रकार की पदोन्नतियों के लिए समीचीन हो।

(2) इन पदों का स्पष्ट श्रेणियों,श्रृंखलाओं, कोटियों तथा सेवाओं के आधार पर समयोचित वर्गीकरण होना चाहिए।

(3) कर्मियों की पदोन्नति निर्धारण हेतु योग्यता का सिद्धान्त अपनाना। कर्मियों को पदोन्नति के अवसरों के प्रति जागरूक होना चाहिए एवं पदोन्नति नीति का ज्ञान होना चाहिए।

मनुष्य एक तर्कयुक्त विकासशील प्राणी है। प्रत्येक व्यक्ति जीवन में प्रगति और विकास करना चाहता है एवं दूसरों में अपनी पहचान बनाना चाहता है। कर्मचारियों के प्रगति एवं अस्मिता की चाह को संगठनों द्वारा पूर्ण किया जाना आवश्यक है। अन्यथा वह असंतुष्ट होगा और उसका नागरिक सेवा से मोह भंग होगा। विकास और पहचान की आधारभूत मानवीय चाह की पूर्ति पदोन्नति के तर्कपूर्ण व्यवस्था के द्वारा पूरा किया जा सकता है। साररूप में न्याय संगत पदोन्नति प्रणाली सरकार और कार्मिकों के मध्य सद्भावना के वातावरण का निर्माण करती है। उच्च स्तरीय नागरिक सेवाओं में पदोन्नति के पर्याप्त अवसर होंगे तो पदसोपानक्रम में निचले स्तर की सेवाओं में भी प्रतिभावान जन आयेंगे जिसके फलस्वरूप प्रशासन की कार्यक्षमता में वृद्धि होगी।

अपने सेवाकाल में नागरिक सेवाओं से सम्बद्ध लोग नवीनतम व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त करते जाते हैं। जिससे वे उच्च से उच्च उत्तरदायित्व निभाने में प्रवीण हो जाते हैं। सारतः हम कह सकते हैं कि माना संसाधन एवं शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग मात्र पदोन्नति की तर्कपूर्ण पद्धति द्वारा ही संभव है।

3.5 पदोन्नति के प्रकार

पदोन्नति के निम्नलिखित प्रमुख तीन प्रकार हैं–

(1) एक ही वर्ग में निम्न श्रेणी से उच्च श्रेणी में पदोन्नति किया यथा कनिष्ठ सहायक से वरिष्ठ सहायक के पद पर पदोन्नति प्रदान करना, इसी प्रकार कनिष्ठ लिपिक से वरिष्ठ लिपिक पद पर पदोन्नति करना।

(2) निम्न वर्ग से उच्च वर्ग में पदोन्नति अर्थ अर्थात् द्वितीय श्रेणी से प्रथम श्रेणी में पदोन्नति प्रदान करना।

(3) निम्नस्तरीय सेवा से उच्चस्तरीय सेवा में पदोन्नति अर्थात राज्य सेवा से अखिल भारतीय सेवा में पदोन्नति करना।

3.6 पदोन्नति के प्रचलित प्रमुख सिद्धान्त

पदोन्नति के लिए लोक सेवकों का चयन किस प्रकार किया जाये एवं पदोन्नति किसे प्रदान किया जाये? कौन उसका पात्र समझा जाय? और कौन न समझा जाय? यह एक महत्वपूर्ण समस्या है। सामान्यतः पदोन्नति के निम्नलिखित दो सिद्धान्त प्रचलित है–

(1) वरिष्ठता का सिद्धान्त ।

(2) योग्यता का सिद्धान्त ।

(1) वरिश्ठता का सिद्धान्त–

इस सिद्धान्त की मान्यता है कि उन्हीं लोक सेवकों को पदोन्नत दी जानी चाहिए जो अधिक दिनों तक की सेवा पूर्ण कर चुके हों अर्थात् जो लोक सेवक सेवा में पहले प्रविष्ट हुआ हो उसकी पदोन्नति पहले और बाद में भर्ती होने वाले की पदोन्नति बाद में की जानी चाहिए। यह पद्धति का सबसे पुराना और सरल पद्धति है। पदोन्नति के इस 'वरिष्ठता सिद्धान्त' का ही अधिकांश कर्मचारी समर्थन करते हैं। वरिष्ठता सिद्धान्त को लागू करना सरल है। यह अत्यन्त वस्तुनिष्ठ है। यह पक्षपात एवं भाई भतीजावाद के लिए कोई अवसर नहीं छोड़ता है। यह सिद्धान्त स्वाभाविक है और यह कर्मचारियों के अनावश्यक और अनुचित गतिरोध को समाप्त करता है। यह उम्र और अनुभव को महत्व देता है। नवान्तुक नौजवानों को अनुभवी व्यक्तियों के ऊपर नहीं बैठाता है। यह अधिक लोकतांत्रिक है क्योंकि अर्हता इत्यादि की अपेक्षा यह सभी को पदोन्नति देने का अवसर उपलब्ध कराता है। अतएव स्टाफ के द्वारा अर्हता–सिद्धान्त के विपरीत वरिष्ठता सिद्धान्त को सहर्ष स्वीकार किया गया है।

लेकिन वरिष्ठता सिद्धान्त में कुछ दोस्त भी होते हैं। सर्वप्रथम यह पात्र कर्मचारियों में से सर्वोत्तम कर्मचारी का चयन करता है। इस तथ्य की कोई विश्वसनीयता नहीं है कि वरिष्ठ व्यक्ति कनिष्ठ व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक योग सिद्ध होंगे। ऐसे अवसर भी आ सकते हैं जब एक अकुशल या कम योग्य व्यक्ति योग्य व्यक्तियों का मुख्य अधिकारी बन जाए जिससे प्रशासन की कुशलता को धक्का पहुँचना संभव है। दूसरी बात, यदि वरिष्ठता ही केवल पदोन्नति का आधार है तो कार्मिक स्वयं सुधारने का तनीक भी प्रयास नहीं करेंगे। अन्तिम बात वरिष्ठता तथा आयु

का समय एक ही हो यह आवश्यक नहीं है। विशेषतः उसी स्तर पर जिसमें कुछ तो प्रत्यक्ष रूप से और कुछ पदोन्नति से चयनित किए जाते हों। फलतः एक हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इसमें कुछ लोग वरिष्ठों से भी ऊपर रखे जा सकते हैं।

वरिष्ठता सिद्धान्त के लिए योग्यता पर कोई अंतिम निर्णय देना अत्यन्त जटिल है। अपने उग्र रूप में वरिष्ठता का सिद्धान्त मात्र सेवा अवधि को पदोन्नति का आधार बनाना एक विवाद ही है। अपने उदार रूप में इसका यह आशय है कि वरिष्ठता द्वारा ही यह क्रम निर्धारित होना चाहिए जिसमें अधिकारियों को पदोन्नति के लिए विचाराधीन रखना चाहिए, लेकिन जो अनुपयुक्त पाए जाएं, छोड़ देने चाहिए। इसे 'वरिष्ठता साहित योग्यता' कहा जाना चाहिए। अन्ततः इस सिद्धान्त का तीसरा रुप यह है कि वरिष्ठता सेवा निचले स्तर पर निर्धारित होनी चाहिए, जबकि उच्चस्तरीय सेवा की स्थिति में योग्यता को पदोन्नति का आधार माना जाना चाहिए। ऐसा वरिष्ठता सहित योग्यता सिद्धान्त की आधारभूत मान्यता है। सिद्धान्तः, यह सभी द्वारा मान लिया गया है कि (1) उच्चस्तरीय पदों पर पदोन्नति करने के लिए योग्यता श्रेष्ठ नियम है। (2) मध्य स्तरीय पदों में पदोन्नति, योग्यता प्रथम एवं वरिष्ठता द्वितीय दृष्टिकोण से विचाराधीन होनी चाहिए। (3) निचले स्तर के प्रतिदिन की प्रकृति वाले पदों में वरिष्ठता पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

योग्यता/अहता सिद्धान्त :–

पदोन्नति के संबंध में दूसरा सिद्धान्त योग्यता का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार पदोन्नति वरिष्ठ तम को नहीं अपितु योग्यतम व्यक्ति को दी जानी चाहिए। यानी पदोन्नति के निर्धारण में लोक सेवकों की व्यक्तिगत योग्यता, क्षमता, दक्षता और कार्यकुशलता को ही महत्व दिया जाना चाहिए। इस सिद्धान्त के पक्षपोषण करने वाले स्कालरों का तर्क है कि यदि योग्यतम व्यक्ति को पदोन्नति का आधार नहीं बनाया गया तो न केवल लोक सेवकों (कार्मिकों) की प्रगति का पथ अवरुद्ध हो जायेगा अपितु प्रशासन हमें भी अक्षमता और अकार्यकुशलता का समावेश हो जायेगा। लेकिन योग्यता को परखना कोई सरल काम नहीं है।

पदोन्नति के योग्यता सिद्धान्त को वास्तविक रूप में लागू करना कठिन है। योग्यता एक जटिल अवधारणा है। योग्यता के अनेक घटक हैं, यथा व्यक्तित्व, चरित्र, नेतृत्व की क्षमता, बौद्धिक योग्यता इत्यादि। वास्तव में योग्यता का मापन सरल नहीं है। पदोन्नति का योग्यता सिद्धान्त वरिष्ठ एवं अनुभवी लोगों को प्रगति के प्रतियोगी अवसर में वंचित कर देता है। यह आयु, अनुभव तथा वरिष्ठता को दरकिनार कर देता है। युवा लोक सेवकों की तुलना में अधिक आयु वाले लोग लिखित परीक्षा तथा साक्षात्कार आदि में सहभाग नहीं कर पाते हैं।

किसी के द्वारा संचित प्रशासनिक अनुभव एवं कौशल को योग्यता के सिद्धान्त के द्वारा पूर्णत: उपेक्षित कर दिया जाता है।

3.7 पदोन्नति हेतु योग्यता की परीक्षण विधियाँ

विगत अध्ययन के फलस्वरुप हम जान चुके हैं कि सरकारी सेवाओं में पदोन्नति के लिए अनुभव की अपेक्षा योग्यता को अधिक महत्वपूर्ण घटक माना जाता है। पदोन्नति के अन्तर्गत हमें पहले से सेवारत लोगों की योग्यता का परीक्षण करना होता है। उन्हें सेवा में भर्ती होने के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता की आवश्यकता होती है। वे तो अपने भर्ती के समय ही लिखित तथा साक्षात्कार परीक्षा पास किये रहते हैं। इस समय तो उच्चस्तरीय पदों पर पदोन्नति करने के लिए मात्र योग्यता का परीक्षण किया जाना होता है जो अत्यन्त संवेदनशील एवं कठिन कार्य है। प्रायः उच्चस्तरीय पदों में रिक्त स्थान अत्यन्त कम होते हैं। शीर्षस्तरीय पदों पर पदोन्नति के लिए उनमें से प्रत्येक स्वयं को सबसे योग्य एवं उपयुक्त अभ्यर्थी मानता है। इस प्रकार की स्थिति में उच्चस्तरीय पदों पर पदोन्नति करने के लिए अभ्यार्थियों की योग्यता की जाँच करना अत्यन्त कठिन कार्य हो जाता है।

सामान्यतया लोकसेवकों की योग्यता आंकने की निम्न तीन विधियाँ प्रचलित है– (1) प्रतियोगी परीक्षाएँ। (2) सेवा अभिलेख अथवा कार्यकुशलता मापन। (3) विभागाध्यक्ष या पदोन्नति मण्डल का व्यक्तिगत निर्णय।

1– **प्रतियोगी परीक्षाए**– पदोन्नति में योग्यता को परखने का सबसे उत्तम रीति पदोन्नति परीक्षा की पद्धति है। ये परीक्षाएँ लिखित भी हो सकती हैं और मौखिक भी। यह एक वस्तुनिष्ठ पद्धति है। साधारणतया तीन प्रकार की परीक्षाएँ आयोजित की जाती है।

(i) खुली प्रतियोगिता परीक्षाए– इस प्रकार की परीक्षा में बैठने का अवसर सभी व्यक्तियों को प्राप्त होता है चाहे वह पहले से सेवा में हो अथवा नहीं। इस परीक्षा के आधार पर चुने हुए व्यक्तियों को रिक्त पदों पर नियुक्त किया जाता है। इसमें विभागीय कर्मचारियों को बाहर के नवयुवकों के साथ प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है।

(ii) सीमित प्रतियोगिता परीक्षा– इस परीक्षा में केवल उन्हीं व्यक्तियों के बैठने की अनुमति दी जाती है जो पहले से ही उस विभाग में सेवा कर रहे होते हैं इसको बन्द या संकुचित परीक्षा भी कहा जाता है।

(iii) उत्तीर्णता परीक्षा– इस प्रकार की पदोन्नति परीक्षा में प्रत्याशी को केवल 'न्यूनतम योग्यता' सिद्ध करके उत्तीर्ण मात्र करना होता है। इसे विभागीय परीक्षा भी कहा जाता है। भारत में इस विधि का प्रयोग लिपिकों, आशुलिपिकों आदि श्रेणियों की पदोन्नति के लिए किया जाता है।

2– सेवा अभिलेख अथवा दक्षता मापन – सेवा अभिलेख व्यवस्था के आधार पर पदोन्नति उन्हीं कर्मचारियों को दी जाती है। जिन्होंने अपने सेवाकाल में अपने उत्तरदायित्व को निर्वहन अच्छे ढंग से किया है और उनको प्राप्त दायित्वों की प्रगति संतोषजनक रही है। प्रत्येक कर्मचारी की एक 'सेवा अभिलेख पुस्तिका' बना दी जाती है। पदोन्नति के समय सेवा अभिलेख में अंकित दक्षता विवरण को देखकर पदोन्नति का निर्णय लिया जाता है। इसका उपयोग कर्मचारी के सापेक्षिक योग्यता मूल्यांकन के लिए किया जाता है। इस विधि में सेवा रिकॉर्ड के आधार पर कुछ गुण, विशेषता, कार्य निष्पादन क्षमता, उत्पादन रिकार्ड आदि के आधार पर आँकलन किया जाता है। कार्य का ज्ञान, व्यक्तित्व, निर्णय क्षमता, पहल करने की शक्ति, यथार्थता, उत्तरदायित्व स्वीकारने की तत्परता, समय की पाबंदी, संगठन क्षमता आदि अथवा कर्मचारी के उत्पादन को निम्नांकित तरीके से निर्धारित किया जा सकता है–

(A) सामान्य से ऊपर

(B) सामान्य

(C) सामान्य से नीचे

या इसे इस प्रकार से भी निर्धारित किया जा सकता है–

(A) उत्कृष्ट

(B) अति उत्तम

(C) उत्तम

(D) साधारण/ठीक

(E) असंतोषजनक

इसके उपरान्त इन श्रेणियों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है–

(A) पदोन्नति के लिए उपयुक्त

(B) पदोन्नति के लिए अभी उपयुक्त नहीं।

(C) पदोन्नति के लिए अनुपयुक्त।

3– विभाग के अध्यक्ष अथवा पदोन्नति मण्डल का व्यक्तिगत निर्णय – इस पद्धति में विभाग का अध्यक्ष पदोन्नति के सन्दर्भ में व्यक्तिगत रूप से योग्यता का निर्धारण करता है। संगठन के अध्यक्ष को अपने विभाग के सभी कर्मचारियों के संबंध में सम्पूर्ण जानकारी रहती है कि अमुक कर्मचारी योग्य, कार्यकुशल, सक्रिय तथा प्रशासनिक क्षमताओं से सम्पन्न है। उसे यह भी ज्ञात होता है कि कौन कर्मचारी काम के प्रति लापरवाह, धोखेबाज, भ्रष्ट, आकर्मण्य तथा अकार्यकुशल है। फलतः विभाग का अध्यक्ष इस सन्दर्भ में उपयुक्त निर्णय लेने में समझ है। इस सन्दर्भ विवेकपूर्ण निर्णय निष्पक्षता के साथ तभी संभव है

जब विभागाध्यक्ष सत्यनिष्ठा का पालन करे। विभागाध्यक्ष द्वारा कार्मिक का मूल्यांकन भी संदेह से मुक्त नहीं है। इस पद्धति में चापलूसी तथा भाई–भतीजावाद को प्रश्रय मिलता है।

पदोन्नति मण्डल या विभागीय पदोन्नति समिति–

पदोन्नति मण्डल या विभागीय पदोन्नति समिति में प्रायः तीन–चार अधिकारी सम्मिलित होते हैं। जो सेवा अभिलेख, साक्षात्कार, उसकी कार्यशैली तथा अन्य आधारों पर कार्मिक की योग्यता का परीक्षण करते हैं। अपने स्वरूप में यह पद्धति तुलनात्मक रूप से उचित प्रतीत होती है।

पदोन्नति के इन दोनों सिद्धान्तों के अपने–अपने गुण एवं दोष हैं। अतः बहुत से पदों पर पदोन्नति के लिए वरिष्ठता तथा योग्यता के संयुक्त आधार को प्रयोग में लाया जाता है।

3.8 श्रेष्ठ पदोन्नति नीति के आवश्यक तत्व

नागरिक सेवा में आने वाले लोगों के लिए नागरिक सेवा जीवन के निर्वाह का साधन है। यह प्रतिभावान लोगों को आजीवन रोजगार प्रदान करती है। इसीलिए नागरिक सेवा में कार्यरत लोगों को उन्नति एवं प्रगति का अवसर मिलना चाहिए। यह पदोन्नति के उचित नीति द्वारा ही सम्भव है। तर्कसंगत एवं न्यायपरक पदोन्नति नीति उच्चस्तरीय खाली पदों को भरने के लिए योग्य एवं सक्षम लोगों अवसर प्रदान करती है। सिविल सेवा की सफलता हेतु एक श्रेष्ठ पदोन्नति नीति नितान्त आवश्यक है। एक श्रेष्ठ पदोन्नति नीति के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं–

1– एक सुनियोजित पदोन्नति नीति पहले से ही परिभाषित होनी चाहिए।

2– सिविल सेवा का पारदर्शी पद्धति से उचित वर्गीकरण होना चाहिए।

3– प्रत्येक सेवा में पदानुक्रम ढंग से व्यवस्थित होना चाहिए।

4– पदोन्नति की रूपरेखा और नियम पूर्व से ही ज्ञात होना चाहिए।

5– पदोन्नति का दायित्व बोर्ड या सीमित को देना चाहिए।

6– पदोन्नति के स्वीकृति नियमों का सही ढंग से अनुकरण किया जाना चाहिए।

7– पदोन्नति अधिकार के बजाय एक सुअवसर है, अतः दूसरे कार्मिकों के साथ प्रतियोगिता में सहभागिता करते हुए पदोन्नति प्राप्त करनी चाहिए।

8– पदोन्नति के लिए वरिष्ठता के साथ–साथ योग्यता एवं कार्यक्षमता के सिद्धान्त का समन्वय होना चाहिए। शीर्षस्तरीय पदों पर पदोन्नति के लिए अभ्यार्थियों के पूर्व के कार्यनिष्पादन, सेवा अभिलेख एवं योग्यता को निर्णायक महत्व मिलना चाहिए।

3.9 भारत में प्रयुक्त पदोन्नति पद्धति

भारत में आधुनिक लोक सेवाएँ (सिविल सेवाएँ) ईस्ट इंडिया कम्पनी ने स्थापित किया। कम्पनी ने सन् 1669 में अपने कार्मिकों को वरिष्ठता के आधार पर पदोन्नति देने का निश्चय किया था तथा ब्रिटिश सरकार ने निवेदन किया था कि भारत में कार्यरत उसके कार्मिकों को पदोन्नति दिया जाय एवं ब्रिटिश से अधिकारी यहाँ न भेजे जाये। सन् 1771 में योग्यता पद्धति को स्वीकारते हुए इसे पदोन्नति का आधार बनाया गया। 1854 की लार्ड मैकाले प्रतिवेदन ने पदोन्नति के योग्यता सिद्धान्त के महत्व रेखांकित किया। इसके साथ वरिष्ठता का सिद्धान्त भी न्यूनाधिक मात्रा मौजूद रहा। भारतीय लोक सेवा अधिनियम 1861 में योग्यता सिद्धान्त को भी अपनाया गया साथ ही पदोन्नति के लिए क्षमता एवं सत्यनिष्ठा इत्यादि पर भी विचार किया गया।

वर्तमान समय में उच्चस्तरीय पदों पर वरिष्ठता तथा योग्यता का संयुक्त आधार वाला सूत्र (फॉर्मूला) अपनाया गया है। जबकि निम्नस्तरीय पदों पर वरिष्ठता का सिद्धान्त ही प्रभावी है।

जैसा कि विदित है कि द्वितीय वेतन आयोग 1969 ने प्रशासन में शीर्ष पर रिक्त पदों को योग्यता–सिद्धान्त के आधार पर तथा मध्यम एवं निम्नस्तरीय पदों को वरिष्ठता तथा योग्यता के संयुक्त आधार पर भरने की अनुशंसा

की। इसी कड़ी में प्रशासनिक सुधार आयोग 1969 ने भी वरिष्ठता तथा योग्यता के संयुक्त आधार की अनुशंसा की।

पदोन्नति के नियम केन्द्र एवं राज्यों के अधीन विभिन्न विभागों में पृथक–पृथक हैं। इस संबंध में कोई सर्वमान्य नीति लागू नहीं है।

यथा–

1– भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा तथा भारतीय वन सेवा के 33 प्रतिशत पद राज्य सेवाओं के अधिकारियों द्वारा वरिष्ठता एवं योग्यता सिद्धान्त से भरे जाते हैं।

2– प्रथम श्रेणी अर्थात ग्रुप 'क' की सेवाओं में 45% पद पदोन्नति से भरे जाते हैं।

3– द्वितीय श्रेणी अर्थात केन्द्र सरकार में ग्रुप 'ख' के 65% से अधिक राजपत्रित पद पदोन्नति से भरे जाते हैं।

4– द्वितीय श्रेणी ग्रुप 'ख' में तीन चौथाई से भी अधिक अराजपत्रित पद पदोन्नति से भरे जाते हैं।

5– तृतीय श्रेणी या ग्रुप 'ग' के अधिकतर पदों पर बाहरी भर्ती होती है।

6– चतुर्थ श्रेणी पद पूर्णतया बाहरी भर्ती से भरा जाता है।

7– विशेषज्ञ सेवाओं, यथा– शिक्षा, चिकित्सा तथा तकनीकी सेवा इत्यादि में अधिकांश उच्च पद पदोन्नति से भरे जाते हैं। इन सेवाओं में प्रायः वरिष्ठता का सिद्धान्त अंगीकार किया जाता है। योग्यता आधारित पदोन्नति के लिए संघ लोक सेवा आयोग तथा कर्मचारी चयन आयोग विभागीय प्रतियोगी परीक्षाएँ आयोजित करवाते हैं, जो निम्नस्तरीय पदों के लिए होती हैं। पदोन्नति से संबंधित सभी महत्वपूर्ण पदों पर विभागों द्वारा लोक सेवा आयोग से परामर्श लेना आवश्यक है।

भारत में पदोन्नति की समस्या एवं त्रुटिया–

पदोन्नति संवेदनशील मुद्दा होने के कारण कार्मिक प्रशासन को प्रभावित करता है। पदोन्नति प्रक्रिया में व्याप्त कमियाँ नियोक्ता एवं कार्मिक दोनों को कष्टकारक लगती हैं। जिसका प्रभाव संगठन की कार्यकुशलता पर पड़ता है। भारत में पदोन्नति संबंधी कमियों को अग्रलिखित बिंदुओं के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है–

1– किसी भी संगठन के पदों का सोपनात्मक ढाँचा पिरामिड के आकार जैसा होता है। निम्नस्तरीय कार्मिकों के पद अधिक होते हैं तथा उच्चस्तरीय पदों की संख्या क्रमशः कम होती चली जाती है। पदसोपान के इस ढाँचे में कुछ विभागों में पदों के स्तर अधिक होते हैं तथा कुछ विभागों में कम होते हैं। इस प्रकार ढाँचे की रचना पदोन्नति को प्रभावित करती है। केन्द्र सरकार विभागों में राज्यों की तुलना में पदोन्नति के अवसर अधिक रहते हैं। प्रत्येक कार्मिक को पदोन्नति के पर्याप्त अवसर होने चाहिए।

2– पदोन्नति के पथ में दूसरा गतिरोध वरिष्ठता बनाम योग्यता है। अधिकांश कर्मचारियों को वरिष्ठता की पदोन्नति व्यवस्था श्रेयस्कर लगती है। इसी कड़ी में कुशाग्र बुद्धि एवं महत्वाकांक्षी कार्मिकों को पदोन्नति की योग्यता वाली व्यवस्था पसन्द है। वरिष्ठता के आधार पर संगठन के शीर्ष एवं निर्णायक पद पर आसीन होने वाला अधिकारी लगभग सेवानिवृत्ति के समीप होता है, परिणामस्वरूप सशक्त एवं नवाचारी निर्णय नहीं ले पाता है।

समाधान–

भारतीय पदोन्नति व्यवस्था में सुधार हेतु कुछ सुझाव विचारणीय हैं–

पदोन्नति की कमियों को दूर करने तथा मानव संसाधन विकास को उचित दिशा देने के लिए लोक सेवाओं में पदोन्नति नीति को व्यवहारिक स्वरूप प्रदान किया जाना चाहिए। जिसके अन्तर्गत भर्ती, पदों की संख्या, प्रशिक्षण तथा विभागीय पदसोपान ढाँचे में यथोचित परिवर्तन समाहित हों। पदोन्नति के लिए वरिष्ठता एवं योग्यता का संयुक्त सिद्धान्त लागू किया जाना चाहिए। सेवानिवृत्ति के उपरान्त कार्यकाल बढ़ाने की परम्परा समाप्त की जानी चाहिए।

3.10 सारांश

पदोन्नति में पदनाम परिवर्तित हो जाता है। यह निम्न पद से उच्च पद की ओर पहुँचने की प्रक्रिया का परिचायक है। इसके अन्तर्गत 'रैंक' निश्चित रूप से बदल जाता है। पदोन्नति प्राप्त कार्मिक का वेतन, प्रतिष्ठा एवं सम्मान बढ़ जाता है। पदोन्नति द्वारा सक्षम व कार्यकुशल कर्मचारी को सेवा में सर्वोच्च पद पर पहुँचने में सहायता मिलती है। पदोन्नति प्रक्रिया की उपादेयता निर्विवाद रूप से महत्वपूर्ण है। इसके द्वारा अनुभवी कर्मचारियों को संगठन में बनाए रखा जाता है। यह सेवीवर्ग में सेवारत लोगों के मध्य से ही खाली स्थानों को अप्रत्यक्ष रूप से भरने की एक प्रक्रिया है। विश्व के अनेक राष्ट्रों में पदोन्नति के योग्यता सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है। साथ ही वरिष्ठता को भी यथोचित स्थान पदोन्नति के लिए दिया गया है। भारत में पदोन्नति के लिए 'वरिष्ठता सहित योग्यता' के सिद्धान्त को अपनाया गया है। भारत में पदोन्नति के लिए वरिष्ठता एवं योग्यता के संयुक्त आधार को स्वीकृति मिली है। विदित है कि यह इस इकाई में हमने पदोन्नति के अर्थ, महत्व, सिद्धान्त एवं प्रकार की विशद् चर्चा की है। साथ ही पदोन्नति के प्रचलित नियमों के गुण एवं दोषों पर भी प्रकाश डाला गया है। इसी कड़ी में भारतीय पदोन्नति पद्धति के विभिन्न आयामों को भी समझने का प्रयास किया गया है। यह उचित ही कहा गया है कि लोक सेवाओं में प्रतिभा का पूर्ण विकास तभी संभव है, जब उचित समय पर उचित पदोन्नति योग्य कार्मिक वर्ग को मिलता रहे।

3.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) पदोन्नति को कहा जा सकता है–

(A) आन्तरिक या अप्रत्यक्ष भर्ती

(B) वाह्य भर्ती

(C) आन्तरिक एवं वाह्य भर्ती

(D) इसमें से कोई नहीं

(2) यह किसका कथन है कि– पदोन्नति में 'रैंक' का बदला जाना सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण है–

(A) सुरेन्द्र नाथ कमेटी

(B) द्वितीय वेतन आयोग

(C) विलोबी

(D) स्कॉट एवं स्प्रीगल

(3) सन् 1793 के चार्टर एक्ट में पदोन्नति के किस नियम को मुख्यतः महत्व प्रदान किया गया–

(A) वरिष्ठता सिद्धान्त

(B) योग्यता सिद्धान्त

(C) वरिष्ठता तथा योग्यता के संयुक्त आधार को

(D) इसमें से कोई नहीं

(4) प्रशासनिक सुधार आयोग (1969) ने पदोन्नति के सन्दर्भ में अनुशंसा की–

(A) वरिष्ठता सिद्धान्त का

(B) वरिष्ठता–सह–योग्यता सिद्धान्त

(C) इसमें से कोई नहीं

(D) एक विशेष पद्धति की

(5) भारतीय लोक सेवा अधिनियम 1861 में–

(A) पदोन्नति के योग्यता सिद्धान्त को अपनाया गया।

(B) इसमें पदोन्नति के सन्दर्भ में विचार नहीं हुआ।

(C) इसने मैकाले रिपोर्ट 1854 को नकार दिया।

(D) इसमें से कोई नहीं।

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) A **(2)** C **(3)** A **(4)** B **(5)** A

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई–4 प्रशिक्षण

4.0 उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 प्रशिक्षण का अर्थ

4.3 प्रशिक्षण उद्देश्य

4.4 प्रशिक्षण का महत्व

4.5 प्रशिक्षण के प्रकार

4.6 मिशन कर्मयोगी

4.7 प्रशिक्षण की समस्याएँ

4.8 सारांश

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- प्रशिक्षण के अर्थ महत्व एवं उद्देश्य को भलीभाँति समझ सकेंगें।
- प्रशिक्षण के कितने प्रकार प्रचलन में हैं, इसके गुण एवं दोष की विवेचना कर सकेंगें। और
- प्रशिक्षण की प्रमुख पद्धतियाँ क्या हैं, प्रशिक्षण की समस्याएँ क्या हैं, इसको समझते हुए इस पर अपना सुझाव प्रस्तुत कर सकेंगें।

4.1 परिचय

वर्तमान युग लोकतंत्र का युग है वर्तमान लोकतंत्र एवं लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा में लोक प्रशासन के कार्य क्षेत्र को विस्तृत कर दिया है। इसके साथ ही लोक प्रशासन के कार्य अत्यन्त विशिष्ट प्राविधिक एवं जटिल होते जा रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप लोक सेवकों का प्रशिक्षण अत्यन्त आवश्यक हो गया है। आज के समय में प्रशिक्षण कार्मिक प्रशासन के अन्तर्गत सर्वप्रमुख एवं महत्वपूर्ण दायित्व बन गया है। एक कुशल लोक सेवा का निर्माण सशक्त, सार्थक एवं वैज्ञानिक प्रशिक्षण के द्वारा ही किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप विकासशील देशों में भी प्रशिक्षण के महत्व को स्वीकार करते हुए उपयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किए जा रहे हैं। क्षेत्र ज्ञान, कौशल और योग्यता में विकास प्रशिक्षण के द्वारा होता है, अतः प्रशिक्षण की लोक सेवा में भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

4.2 प्रशिक्षण का अर्थ

प्रशिक्षण का शाब्दिक अर्थ है– 'किसी कला एवं व्यवसाय में व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना।' लोक प्रशासन में इसका अभिप्राय लोक सेवकों को अपने कार्य के लिए तैयार करने से लगाया जाता है। मैण्डेल ने प्रशिक्षण का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''प्रशिक्षण का अर्थ है किसी को नये कार्य के लिए उन्मुख करना, वर्तमान कार्य के लिए ज्ञान तथा कौशल विकसित करना तथा भविष्य के उत्तरदायित्वों के लिए तैयार करना है।''

लोक प्रशासन के प्रचलित अर्थ में **डा0 एम0 पी0 शर्मा** का मत है कि ''प्रशिक्षण एक प्रत्यक्ष प्रयत्न है जिसके द्वारा कर्ता अपने कौशल, अपनी क्षमता एवं प्रतिभा को आगे बढ़ाता है।'' प्रशिक्षण के माध्यम से लोक सेवकों की प्राविधिक कुशलता में वृद्धि करना तथा प्रशासनिक कार्यों के लिए उत्साह का संचार करना है। साररूप में, प्रशिक्षण व चेतनायुक्त प्रयास है जिसके द्वारा लोक सेवकों की कार्य क्षमता और व्यावहारिक ज्ञान में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप दिए गए कार्यों को वह सम्पन्न कर पाता है।

4.3 प्रशिक्षण का उद्देश्य

प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य लोक सेवकों को दक्षता प्रदान करना है। यह प्रशासकीय कार्यों और आवश्यकताओं के अनुरूप लोक सेवकों में ज्ञान एवं कार्यकुशलता को विकसित करता है। 1944 ई0 मैं 'ऐशेटन समिति' ने प्रशिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्य बताये थे–

(1) प्रशिक्षण से लोक सेवकों के कार्य में अस्पष्टता आती है।

(2) कार्मिक/लोक सवको में नवीन उत्तरदायित्व को पूर्ण करने की क्षमता उत्पन्न होती है।

(3) वह सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल व्यवहार करने के योग्य बनता है।

(4) यह उच्चस्तरीय दायित्वों को पूरे करने में सहायक है।

(5) कार्मिकों के नैतिक चरित्र को ऊँचा उठाने में कारगर है।

उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों से स्पष्ट है कि प्रशिक्षण का कार्य किसी संगठन में कार्यरत कार्मिकों के वर्तमान ज्ञान तथा कौशल को बढ़ाना है जिससे वे कार्य को कुशलतापूर्वक कर सकें तथा भविष्य में आने वाले उच्च दायित्वों को पूर्ण करने के लिए क्षमता अर्जित कर सकें। प्रशिक्षण के द्वारा कार्मिक के चिंतन प्रक्रिया को मानवीय संवेदना से युक्त बनाया जाता है।

वास्तव में प्रशिक्षण द्वारा अनेक प्रकार की श्रम संबंधी समस्याओं का समाधान खोजा जा सकता है, जो सर्वश्रेष्ठ उत्पादकता के मार्ग में गतिरोध उत्पन्न करती हैं। रिचर्ड जानसन की दृष्टि में इन समस्याओं में आबद्ध हैं–

(1) उत्पादकता बढ़ाना।

(2) कार्य की गुणवत्ता सुधारना।

(3) नवीन समझ, ज्ञान तथा व्यवहार विकसित करना।

(4) प्राविधिक क्षमता विकसित करना।

(5) हानि, उत्पादन, विलम्ब, अनुपस्थिति तथा अन्य ऊपर के व्यय घटाना।

(6) नवीन नीतियाँ तथा अधिनियम लागू करना।

(7) निपुणता, तकनीकें, विधियाँ, उत्पादन, बाजार और पूंजी प्रबन्ध के लिए तैयार करना।

(8) शत–प्रतिशत निष्पादन का स्तर प्राप्त करना।

(9) प्रतिस्थापना विकसित करना, उन्नति के लिए नागरिक को तैयार करना, श्रम शक्ति का विकास करना।

(10) उद्यम के पुनर्जन्म तथा वृद्धि को निश्चित करना।

निःसंदेह किसी संगठन के प्रभावशाली क्रियान्वयन के लिए प्रशिक्षण एक प्राथमिक आवश्यकता बन गई है। इसीलिए दुनिया के लगभग सभी देशों में सार्वजनिक कर्मचारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम सुनियोजित ढंग से संगठित किए जाते हैं। संक्षेप में प्रशिक्षण के निम्नांकित उद्देश्य होते हैं–

- सेवाओं के प्रयोजन से व्यावसायिक कुशलता उपलब्ध कराना।
- समय अनुकूल नवीन लक्ष्यों का बोध कराना।
- आत्मविश्वास का संचार करना।
- नवीन तकनीक एवं नव नवोन्मेषी विचारों से परिचित कराना।
- कर्मचारी की मानसिक स्थिति सुदृढ़ करना।
- कार्मिकों में सत्यनिष्ठा, अभीप्रेरणा तथा उत्साह पैदा करना। और
- कार्मिकों के विजन को व्यापकता प्रदान करते हुए संगठन की कार्यशैली तथा प्रतिष्ठा को बढ़ाना।

4.4 प्रशिक्षण का महत्व

प्रशिक्षण लोक सेवाओं की उद्देश्य पूर्ति के लिए आवश्यक तत्व है। प्रशिक्षण के माध्यम से किसी कार्य या उद्देश्य, सामाजिक उपादेयता तथा सरकार का दृष्टिकोण सेविवर्ग को समझ में आता है। उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण के काल में आज लोक प्रशासन सुविधा प्रदानक प्रशासन के रूप में क्रियाशील है, ऐसे में नागरिक केन्द्रित विकास संबंधी कार्यों को गति देने का दायित्व भी इसके ऊपर है, ऐसे में उच्चीकृत प्रशिक्षण सेवा कर्मियों को मिलनी चाहिए। संगठन के कार्मिकों को मानव संसाधन के रूप में देखा जाता है। मानव संसाधन की प्रगति में उपयोग तभी सम्भव है जब प्रशिक्षण उचित तरीके संचालित किया जाए। आज का समाज 'ज्ञान आधारित' समाज है। आज के युग में ज्ञान को उत्पादक तभी बनाया जा सकता है, जब परिवर्तित परिवेश के दृष्टि से प्रशिक्षण लोक सेवकों को प्रदान किया जाए।

4.5 प्रशिक्षण के प्रकार

प्रशिक्षण का वर्गीकरण इसकी विधियों, कार्यकाल, कार्मिकों के भविष्य का स्तर जिस पर यह दी जानी है, और प्रशिक्षण का उद्देश्य क्या है– इन सभी कारकों के आधार पर किया जा सकता है।

मोटे रूप से प्रशिक्षण दो प्रकार का होता है–

(1) अनौपचारिक प्रशिक्षण

(2) औपचारिक प्रशिक्षण ।

(1) अनौपचारिक प्रशिक्षण – अनौपचारिक प्रशिक्षण में या भाव निहित है कि इसमें कार्य करके त्रुटियों से सीखकर एवं अभ्यास के माध्यम से प्रशासकीय कार्यकुशलता प्राप्त की जाती है। अनौपचारिक प्रशिक्षण का संबंध कर्मचारी के नियमित कृत्यों से होता है। जिससे वह अपने निजी अनुभव से संयुक्त करके उसका सर्वोत्तम लाभ उठा सकता है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इसकी प्रवृत्ति सकारात्मक होती है। इसका प्रभाव गहरा पड़ता है। अनौपचारिक प्रशिक्षण की पद्धति को अंग्रेजों ने भारत में अपनाया था। इसमें सामान्यतः नव नियुक्त अधिकारी जिलाधीश के पास जाता था और अपनी सेवा के प्रारम्भ में कुछ दिनों तक जिलाधीश के साथ रहता था। जिसके परिणाम स्वरूप जिलाधीश से उच्च गुणवत्ता पूर्ण प्रशासकीय व्यवहार सीखता था।

(2) औपचारिक प्रशिक्षण– औपचारिक प्रशिक्षण का लक्ष्य कर्मचारी के सेवाकाल में विभिन्न चरणों में सुनिश्चित पाठ्यक्रमों द्वारा प्रशासकीय दक्षता प्रदान करना है। अनौपचारिक प्रशिक्षण व्याख्यान, समूह ज्ञानात्मक विमर्श, विशिष्ट पाठ्यक्रम, वित्तीय प्रबन्ध, सम्मेलन तथा सेमिनारों के द्वारा दिया जाता है।

औपचारिक प्रशिक्षण को सहज ढंग से समझाने के लिए इसे प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

(1) प्रवेश–पूर्व प्रशिक्षण– इसका उद्देश्य शासकीय सेवा में प्रवेश के लिए किसी कुशाग्र बुद्धि अभ्यर्थी को तैयार करना है। इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो हमें ज्ञात होता है, स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा भी प्रवेश–पूर्व प्रशिक्षण ही है। एक चिकित्सा विज्ञान का डॉक्टर तथा एक इंजीनियर क्रम से एम0बी0बी0एस0 तथा बी0 टेक की उपाधि प्राप्त करने के दौरान इसी प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त करता हैं।

(2) सेवाकालीन प्रशिक्षण– सेवाकालीन प्रशिक्षण में मुख्यतः दो धारणाओं पर बल दिया जाता है। प्रथम, कार्मिक वर्ग को अच्छे–अच्छे प्रश्नों के लिए उत्साहित करना और द्वितीय, उसके कार्यपालन क्षमता में सुधार करना। भारत में उच्चतर सेवाओं के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं।

(3) प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण– प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण कर्मचारी के कार्य से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित नहीं है। लेकिन संगठन के दृष्टिकोण से आवश्यक एवं सहयोगी प्रतीत होता है। इस सन्दर्भ में मूल्यवान निष्कर्ष है की प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण का प्रत्यक्ष संबंध कर्मचारियों के कार्य से नहीं होता है किन्तु यह संगठन के लिए लाभदायक होता है।

(4) पुनरावलोकन प्रशिक्षण– पुनरावलोकन प्रशिक्षण का ध्येय नवनियुक्त कर्मचारी को कार्य संबंधी आधारभूत अवधारणाओं, संगठन के लक्ष्य एवं पर्यावरण के प्रति संज्ञानात्मक बोध पैदा करना है। इससे लोक सेवकों को विदित होता है कि जो कुछ भी श्रेयस्कर किया जा सकता है, उसका अधिकांश उसे स्वयं ही करना चाहिए।

4.6 मिशन कर्मयोगी

2 सितम्बर, 2020 को प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने मिशन कर्मयोगी राष्ट्रीय सिविल सेवा क्षमता विकास कार्यक्रम को प्रारंभ करने की स्वीकृति प्रदान की है एकीकृत सरकारी ऑनलाइन प्रशिक्षण को क्रियान्वित करने के लिए प्रारंभ किया गया है इस योजना के अंतर्गत ऑफ साइट सीखने की पद्धति को उत्कृष्ट बनाते हुए आन साइट सीखने की पद्धति पर बल दिया गया है मिशन कर्मयोगी को एक नए क्षमता विकास का प्रतिमान के रूप में सरकार ने प्रस्तुत किया है। इसमें निम्नांकित विचार शामिल है ।

(1) सभी विभागों एवं सेवाओं के लिए वार्षिक क्षमता विकास योजना का निर्धारण करना।

(2) क्षमता विकास योजना के कार्यान्वयन की निगरानी करना ।

(3) दक्षतापूर्ण सेवा वितरण सुनिश्चित करने के लिए बड़े पैमाने पर क्षमता विकास प्रयास

(4) प्रौद्योगिकी अभीमुखी अधिगम की अध्यापन कला का संवधेन करना ।

मिशन कर्मयोगी के छह स्तंभों पर टिका है ये है –

(1) नीतिगत सरचना इसमें नई प्रशिक्षण नीतियां जिसमें निरंतर क्षमताओं को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा।

(2) क्षमता गत ढांचा इसमें सर्वेद एस सी स्वदेशी स्वदेशी क्षमता गत ढांचे के साथ नियम से भूमिका में परिवर्तन करना ।

(3) संस्थागत ढांचा इसके तहत पीएम एच आर परिषद द्वारा निगरानी की जाएगी।

(4) आईगाट कर्मयोगी यह व्यापक स्तर पर लर्निंग प्लेट फार्म उपलब्ध करेगा ।

(5) ई–एच आर एम एस रू नीति परक मानव संसाधन प्रबंधन, और

(6) एम तथा ई–लगातार कार्य–निष्पादन विश्लेषण डेटा आधारित लक्ष्य निर्धारण ।

4.7 प्रशिक्षण की समस्याएँ

प्रशिक्षण की प्रभावकारिता एवं सफलता का निर्धारण इस तथ्य से होता है कि प्रशिक्षण के उपरांत लोकसेवक को कितना लाभ हुआ प्रशिक्षण के बाद कर्मचारी के स्तर साम्मान और वेतन में यदि वृद्धि नहीं होती तो वह निराश होता है। प्रशिक्षण की उपलब्धि का मूल्यांकन उसके उद्देश्य के आलोक में होना चाहिए। प्रशिक्षण तब तक फलदाई नहीं होगा जब तक उच्च स्तरीय प्रशासक उदासीन बने रहेंगे। उच्च प्रशासक को प्रशिक्षण के मूलभूत आवश्यकताओं को पहचानना चाहिए लोक सेवा के प्रशासकों को भर्ती एवं प्रशिक्षण के मध्य प्रभावपूर्ण समन्वय स्थापित करना चाहिए। प्रशिक्षण के मद में धन आवांटन पर्याप्त होना चाहिए जिससे आवश्यक संख्या में स्टाफ और प्रशिक्षण के पर्याप्त साधन उपलब्ध हो सके। प्रशिक्षण का दृष्टिकोण समस्या समाधान की पद्धति पर आधारित होना चाहिए। प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे कर्मचारियों को ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि वह कुछ नया सीख रहे हैं, जिससे उनकी प्रशासकीय क्षमता का विकास हो सके।

प्रशिक्षण से सम्बन्धित अनेक प्रशासनिक समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं। प्रशिक्षण कार्य से संलग्न कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं का अध्ययन **टोरपे (Torpey)** ने इस प्रकार किया है–

1. प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अनुचित मूल्यांकन : प्रशिक्षण की प्रभावशीलता एवं सफलता का निश्चय इससे होता है कि प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद प्राप्तिकर्त्ता को क्या लाभ हुआ। यदि प्रशिक्षित होने के बाद उसे कोई आर्थिक लाभ नहीं होता या सम्मान प्राप्त नहीं होता तो वह उसमें उदासीन दृष्टिकोण अपनाएगा। इसी प्रकार यदि प्रशिक्षण कार्य के स्तर को ऊँचा नहीं उठाता, उसे मात्रा एवं गुण की दृष्टि से आगे नहीं बढ़ाता, तो संगठन उसमें किसी प्रकार की रूचि नहीं लेगा। प्रशिक्षण प्रदान करने के बाद प्रशिक्षक एवं प्रशिक्षणार्थी दोनों ही इस बात को भुला देते हैं। परिणाम यह होता है कि प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर किया गया समय व्यर्थ चला जाता है। जहाँ सेवीवर्ग अधिकारियों का यह विश्वास होता है कि प्रशिक्षण के लिए उन्हें जहाँ होना चाहिए वहाँ प्रशिक्षण द्वारा किन्हीं आवश्कताओं की पूर्ति का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

किसी भी संगठन में प्रशिक्षित सदस्यों की अधिक संख्या, उसको सिखाए गए विषयों की मात्रा, प्रमाण–पत्रों की संख्या आदि का स्वयं में कोई महत्व नहीं होता और वे आवश्यक रूप से एक सफल प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रतीक नहीं है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों का उचित मूल्यांकन करते समय प्रशिक्षक को कार्यक्रम के लक्ष्यों की दृष्टि से विश्लेषण करना चाहिए। **स्टाल (Stahl)** ने भी लिखा है कि प्रशिक्षण कार्यक्रम का मूल्यांकन उसके लक्ष्यों की दृष्टि से किया जाना चाहिए। उनके मतानुसार यह लक्ष्य तुरन्त का तथा दूरगामी दोनों ही प्रकार का हो सकता है। इस प्रकार वस्तुगत दृष्टि से किया गया मूल्यांकन भावी प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देता है।

मूल्यांकन करते समय प्रशिक्षण कार्यक्रम के परिणामों को देखना चाहिए। परन्तु केवल परिणामों पर आधारित मूल्यांकन भी वैधानिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि कई बार अनेक अप्रत्यक्ष अवरोध प्रशिक्षण के एक श्रेष्ठ कार्यक्रम को भी परिणामों की दृष्टि से शून्य बना देते हैं। कई बार यह सुझाव दिया जाता है कि यह मूल्यांकन यदि प्रशिक्षण समिति द्वारा किया जाए तो उपयुक्त होगा। मूल्यांकन की प्रक्रिया को अनेक ऐसी घटनाओं द्वारा भ्रमित किया जा सकता है जिन पर नियन्त्रण नहीं रखा जा सकता। उदाहरण के लिए नई कार्यपालिका का बनना, बजट में कमी होना, समाचार–पत्रों की आलोचना, अन्य राजनीतिक क्रियाएँ आदि। फिर भी स्टाल की मान्यता के अनुसार प्रशिक्षण का निश्चित एवं न्यायिक मूल्यांकन करने के लिए लक्ष्यों एवं उसके परिणामों पर केन्द्रित रहना कई बार अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है।

2. उच्चतर प्रशासकों का प्रशिक्षण के प्रति नकारात्मक दृश्टिकोण : कुछ प्रशासक इस प्रकृति के होते हैं कि प्रशिक्षण कार्य को व्यर्थ समझते हैं। वे प्रशिक्षण कार्यक्रमों को केवल इसीलिए समर्थन देते हैं क्योंकि ये लोकप्रिय हो चुके हैं किन्तु अन्य आवश्यक सहयोग से वे हाथ खींच लेते हैं। यदि किसी अभिकरण में कोई नया उच्चाधिकारी ऐसा आ जाए जो प्रशिक्षण कार्यक्रमों की उपयोगिता में विश्वास नहीं रखता तो वह अब तक चली आ रही प्रशिक्षण योजनाओं को छिन्न–भिन्न कर देगा। प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रति अरुचि का कारण कुछ भी हो सकता है। प्रायः ऐसा अधिकारी जबकि वह अपने परीश्रम और मेहनत से उच्च पद पर आया है और जिसने प्रशिक्षण योजनाओं का कोई लाभ नहीं उठाया, वह दिल से इनका समर्थन नहीं करेगा। टोरपे का कहना है कि किसी अभिकरण में प्रशिक्षण कार्यक्रम की सफलता के लिए उच्च प्रबन्ध को उसकी मूलभूत आवश्कता पहचाननी चाहिए और उसे अपना हार्दिक समर्थन देना चाहिए।

3. कर्मचारी के कार्यों और प्रशिक्षणों के कार्यों के बीच ढीला समन्वय : सेवीवर्ग की भर्ती तथा उनके प्रशिक्षण की समस्याएँ परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। यदि अयोग्य व्यक्तियों की भर्ती कर ली गई तो अच्छे से अच्छा प्रशिक्षण कार्यक्रम भी उनको योग्य नहीं बना सकता। इसी प्रकार यदि प्रशिक्षण कार्यक्रम निकम्मा है तो भर्ती किए गए व्यक्ति की उत्कृष्ट योग्यताएँ भी कुण्ठित हो जाएँगी। अतः यह जरूरी है कि भर्तीकर्त्ता एवं प्रशिक्षणकर्त्ता दोनों के बीच उचित समन्वय हो। इस समन्वय का अभाव प्रशासन की एक महत्वपूर्ण समस्या है। कुल मिलाकर टोरपे का यह कहना सत्य है कि सेवीवर्ग प्रशासकों को भर्ती एवं प्रशिक्षण के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध को समझना चाहिए और इन क्रियाओं के बीच लगातार प्रभावशाली समन्वय स्थापित रखना चाहिए।

4. सेवाकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की प्रामाणिकता : जब तक प्रशिक्षण का कोई व्यवहारिक उपयोग नहीं होता, तब तक प्रशिक्षणार्थी उसमें अपना पूरा ध्यान एवं शक्ति नहीं लगा पाता है। यदि सेवाकालीन प्रशिक्षण को पदोन्नति आदि की दृष्टि से महत्व नहीं दिया जाता तो प्रशिक्षित व्यक्ति को घोर निराशा होती है। अनेक प्रशासकीय संगठनों में यह एक सामान्य प्रवृत्ति है कि पदोन्नति करते समय केवल प्रशिक्षण को योग्यता का आधार नहीं बनाया जाता। यदि एक प्रशिक्षित व्यक्ति को पदोन्नति का अवसर दिया जाता है तो इसके दूसरे कई कारण होते हैं न कि यह कि उसने प्रशिक्षण प्राप्त किया है।

इस समस्या का समाधान करने के लिए प्रायः यह सुझाया जाता है कि प्रशिक्षण अधिकारियों तथा सेवीवर्ग अधिकारियों के बीच इस प्रकार समझौता होना चाहिए कि अमुक प्रशिक्षण प्राप्त कर लेने के बाद एक व्यक्ति को पदोन्नति तथा अन्य लाभ का पात्र मान लिया जाएगा। प्रशिक्षण–कार्य को पदोन्नति कार्यक्रम अभिकरण का एक अभिन्न अंग बना देना चाहिए।

4.8 सारांश

उपर्युक्त वर्णित प्रशिक्षण के उद्देश्य, विशेषताएँ एवं प्रकारों के विवेचन के फलस्वरुप ज्ञात हुआ कि प्रशिक्षण से ज्ञान प्राप्त होता है। जो लोक सेवकों के प्रशासकीय क्षमता में वृद्धि करता है। प्रशिक्षण विशिष्ट कौशल निर्माण

एवं अभिवृत्ति पैदा करने में उपयोगी है। प्रशिक्षण मानव संसाधन विकास का एक महत्वपूर्ण घटक है। लोक सेवाओं में प्रशिक्षण की मौजूदा प्रणाली सामाजिक आर्थिक क्षेत्रों में हुई परिवर्तनों और नई उभर रही चुनौतियों को पर्याप्त रूप से प्रतिबिंबित नहीं करती। इसमें अग्रणी अवस्था के स्तर के पदाधिकारियों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं पर पर्याप्त बल नहीं दिया जाता। इसी कड़ी में रेखांकनीय है कि प्रशिक्षण को और अधिक उद्देश्य पूर्ण होना होगा और विकास की प्रक्रिया के साथ कदम मिलाकर चलना होगा। प्रशिक्षण को और अधिक परिणाम केंद्रित बनाना होगा और समस्या समाधान दृष्टिकोण से लैस करना होगा।

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) प्रशिक्षण के अर्थ, महत्व एवं उद्देश्यों की विवेचना कीजिए।

(2) औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रशिक्षण के गुण एवं दोषों का विस्तृत विवेचन कीजिए।

(3) प्रशिक्षण पद्धति में क्या समस्याएँ परिलक्षित होती है? विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पी प्रश्न :–

(1) ऐशेटन समिति, 1944 किससे सम्बन्धित है ?

(A) भर्ती

(B) कार्य–निष्पादन प्रणाली

(C) पदावधि

(D) प्रशिक्षण

(2) चिकित्सा विज्ञान और तकनीकी शिक्षा ये किस प्रकार के प्रशिक्षण है ?

(A) प्रवेश–पूर्व प्रशिक्षण

(B) सेवाकालीन प्रशिक्षण

(C) प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण

(D) पुरनावलोकन प्रशिक्षण

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) D (2) A

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई– 5 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 परिचय

5.2 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता और महत्व

5.3 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन का अर्थ

5.4 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन का उद्देश्य

5.5 मूल्यांकनकर्ता की भूमिका

5.6 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की पद्धतियाँ

5.7 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को प्रभावित करने वाले कारक

5.8 भारत में इस सन्दर्भ में आयोगों की अनुशंसाएँ

5.9 सारांश

5.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त–

- कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता और महत्व का विवेचन एवं विश्लेषण कर सकेंगें।
- कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के अभिप्राय, उद्देश्यों और पद्धतियों का वर्णन कर पायेंगें।
- उन विभिन्न कारणों की विवेचना कर सकेंगे जो कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को प्रभावित करते हैं, और
- भारत सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की पद्धति की विवेचना एवं सम्यक मूल्यांकन कर सकेंगें।

5.1 परिचय

शासन में लोक सेवकों को वरिष्ठता एवं योग्यता के आधार पर पदोन्नतियाँ दी जाती हैं। अब मूल्य प्रश्न यह उठता है कि एक अभ्यर्थी (जो सेवा में कार्यरत हैं) की योग्यता पर उचित निर्णय कैसे किया जाए। इस क्रम में न्यायसंगत और निष्पक्ष होने के लिए अपने संगठन में व्यक्ति के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है। दुनिया के सभी देशों में अब यह सुचारू रूप से किया जा रहा है। आज के समय में सुशासन के कारण सरकार के उत्तरदायित्व की धारणा अधिक प्रबल हो गई है। प्रशासन के जवाबदेही और पर सीता पारदर्शिता के धारणा के कारण कार्य–निष्पादन का महत्व बढ़ गया है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन पदोन्नति नीति का अत्यन्त महत्वपूर्ण घटक है। यह कार्यकुशल एवं क्षमतावान लोक सेवकों को न्याय प्रदान करने का एक सशक्त उपकरण है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा ही उच्च पद और श्रेणी में पदोन्नति का निर्धारण किया जाता है।

5.2 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व

प्रत्येक लोक सेवक द्वारा सम्पन्न कार्य का वास्तविक तथा निष्पक्ष मूल्यांकन करना कार्मिक तथा संगठन दोनों के हित में है। प्रत्येक संगठन में सभी कर्मचारी संगठन द्वारा निर्धारित समान लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की उपलब्धि

के लिए कार्य करते हैं। परन्तु सभी कर्मचारियों की क्षमताएँ और गुण एक समान नहीं होते हैं। व्यक्तिगत गुण प्रत्येक व्यक्ति के भिन्न–भिन्न होते हैं। सांगठनिक दायित्वों के कारण सभी को साथ–साथ काम करना होता है। ऐसे में क्षमतावान एवं कुशल कर्मचारियों के मनोबल को ऊँचा रखने के लिए उनकी कार्यशैली एवं कार्य स्तर के सन्दर्भ में सूचना देना आवश्यक हो जाता है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन वर्तमान कार्य निष्पादन करने की योग्यताओं के सामयिक मूल्यांकन सहित कर्मचारी के उन गुणों को खोजता है जो भविष्य भविष्य में उच्च स्तरीय उत्तरदायित्वों के निर्वहन में सहायक होते हैं। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता को निम्नांकित बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है–

- कार्य–निष्पादन मूल्यांकन प्रत्येक कर्मचारी को उसकी कुशलता एवं क्षमताओं का दर्पण दिखाता है।
- संबंधित दायित्वों की पूर्ति में और अधिक कुशलता प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करता है।
- संगठन में उच्च पदों पर आसीन अधिकारियों को भविष्य की कार्मिक नीति एवं पदोन्नति नीति बनाने में सहायता प्रदान करता है।

कार्य–निष्पादन मूल्यांकन से प्रत्येक कर्मचारी को फीडबैक मिलता है जिससे वह कुशल तथा सक्षम बनने का प्रयत्न करता है, जिससे संगठन के उद्देश्यों को पूर्ण करने में सहायता मिलती है। कार्य–निष्पादन प्रणाली से कर्मचारियों के कार्यप्रणाली में सुधार होता है, साथ ही यह संगठन के समग्र सुधार में भी सहायक है। फलतः इसके लिए एक न्यायपूर्ण और निष्पक्ष पदोन्नति नीति का अनुसरण आवश्यक हो जाता है। जो कर्मचारियों के मनोबल को श्रेष्ठ बना सके। यह कर्मचारियों की कमियों का भी सटीक पता लगाता है। इन कमियों को जानकर वरिष्ठ अधिकारी पदोन्नति संबंधी निर्णय लेते हैं। परिणामस्वरूप यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि कार्य–निष्पादन मूल्यांकन आधुनिक कार्मिक प्रबन्ध की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण गतिविधि है।

5.3 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन का अर्थ

योग्यता के आधार पर पदोन्नति प्रणाली को अंगीकार करने के उपरान्त एक अत्यन्त सक्षम 'कार्य–निष्पादन मूल्यांकन प्रणाली' की आवश्यकता होती है। इसमें संगठन के प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए इससे जुड़े व्यक्ति की योग्यता का परीक्षण किया जाता है। इसका यह अभिप्राय है कि कार्य–निष्पादन मूल्यांकन द्वारा कर्मचारी के कार्यशैली में व्याप्त कमियों को उजागर किया जाता है। साथ ही कार्य–निष्पादन मूल्यांकन का अर्थ कर्मचारी की विकास संभावना का मूल्यांकन करना भी है। सारतः हम कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के माध्यम से निम्नलिखित का मूल्यांकन कर सकते हैं–

(A) इसके द्वारा कर्मचारी की विकास सम्बन्धी संभावना का पता लगाया जा सकता है।

(B) कर्मचारियों के कार्य क्षमता के अनुरूप प्रशिक्षण की आवश्यकता को समझा जा सकता है।

(C) कर्मचारी के क्षमताओं को समझते हुए उसे उच्चस्तर के पदों पर पदोन्नति कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के फलस्वरुप दिया जा सकता है।

(D) कर्मचारियों के आचरण और अनुशासन को संगठन के अनुसार ढालने में यह सहायक है।

(E) इसके द्वारा कर्मचारियों पर नियंत्रण स्थापित किया जाता है। जो संगठन की मूल भावना के अनुरूप होता है।

5.4 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन का उद्देश्य

कार्मिक प्रशासन में कार्य–निष्पादन मूल्यांकन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसके द्वारा कर्मचारी की प्रगति तथा क्षमताओं का आकलन संभव हो पाता है, जो अन्ततः संगठन के हितों की पूर्ति में सहायक होता है। इसका प्रमुख उद्देश्य ऐसे कर्मचारियों को पुरस्कृत करना है जो संगठन के लिए सत्यनिष्ठा एवं कार्यकुशलता से कार्य कर रहे होते हैं। साथ ही इसका दूसरा पहलू यह है कि ऐसे लोगों को हटाना जो अकुशल है और अपने उत्तरदायित्व को निभाने के योग्य नहीं है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन प्रणाली को निरन्त जारी रखने से योग्य कर्मचारी के साथ अन्याय नहीं होता है। इसके लिए आवश्यक है कि संगठन में कार्यशील कर्मचारियों की भूमिका और उत्तरदायित्व को स्पष्ट रूप

से परिभाषित किया जाय। संक्षिप्त रूप में कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. कर्मचारियों को उसकी कमियों से अवगत कराने तथा उससे छुटकारा पाने में सहायता देना। उसकी क्षमताओं में वृद्धि करने का प्रयास करना।
2. कर्मचारी को प्रतिवेदनकर्ता अधिकारी के माध्यम से समुचित सुझाव प्रदान करना।
3. वास्तविक लक्ष्य निर्धारण में कर्मचारियों की क्षमताएँ विकसित करना।
4. पुरस्कार, वेतन, प्रशंसा, अतिरिक्त उत्तरदायित्व तथा पदोन्नति में सहायता प्रदान करना।
5. अभिप्रेरणा, प्रशिक्षण तथा विकास के प्रयोजन हेतु कर्मचारियों के कार्य निर्धारण में सहायता देना और
6. कर्मचारी के सन्दर्भ में वास्तविक उपयोगी स्वतंत्र एवं वैध सूचनाओं के क्रम में उपयोगी सिद्ध होना।

उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों से स्पष्टतः कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की सार्थकता सिद्ध होती है। इसी पद्धति के द्वारा अधिकारी, कर्मचारी के वास्तविक क्षमता से अवगत हो पातें है। इसके द्वारा संगठन के उच्च अधिकारी को उपलब्ध मानव संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने की संज्ञानात्मक दृष्टि प्राप्त होती है। इस प्रणाली के वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा किसी संगठन में छुपी हुई प्रतिभाओं को पहचाना जाता है।

5.5 मूल्यांकनकर्ता की भूमिका

कार्य– मूल्यांकन के तत्संबंधी प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका मूल्यांकनकर्ता अधिकारी निभाता है। सामान्यतः किसी भी कर्मचारी का उच्चाधिकारी ही मूल्यांकनकर्ता होता है। भारतीय प्रशासनिक प्रणाली में संबंधित विभागों के विभागाध्यक्ष प्रतिवर्ष इस कार्य को निष्पादित करते हैं। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को गति देने के लिए परिवर्तित परिवेश में नित्य नवीन विधियाँ निजी क्षेत्रों में अपनायी जा रही है। जिममें मैनेजमेंट ग्रुप अप्रेजल, स्टॉप ग्रुप अप्रेजल, कमेटी अप्रेजल तथा पीअर अप्रेजल विधियाँ प्रमुख हैं। इस क्रम में उल्लेखनीय है कि विभागध्यक्ष द्वारा मूल्यांकन का कार्य निर्बाध गति से बड़ी संख्या में कर्मचारियों के लिए किया जाता है। विदित है कि विशेषज्ञ द्वारा किए जाने वाले मूल्यांकन में कर्मचारियों के वास्तविक कार्यक्षमताओं एवं कौशल की परख की जाती है।

निष्पादन मूल्यांकन प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका मूल्यांकनकर्ता व्यक्ति निभाता है। सामान्यतः किसी भी कर्मचारी का उच्चाधिकारी ही मूल्यांकनकर्ता होता है। विदेशी संगठनों तथा बड़े औद्योगिक संस्थानों में मूल्यांकनकर्ताओं को सम्बन्धित कार्य का प्रशिक्षण भी दिलवाया जाता है जबकि भारतीय प्रशासनिक तंत्र में सम्बन्धित विभागों के 'विभागाध्यक्ष' बिना किसी औपचारिक प्रशिक्षण के इस कार्य को अति सामान्य ढंग से प्रतिवर्ष निष्पादित करते हैं। निष्पादन मूल्यांकन कार्य को सफलतापूर्वक निष्पादित करने के लिए नित्य नयी विधियाँ निजी क्षेत्रों में अपनाई जा रही हैं जिनमें मैनेजमेण्ट ग्रुप अप्रेजल, स्टाफ ग्रुप अप्रेजल, कमेटी अप्रेजल तथा पीअर अप्रेजल विधियाँ प्रमुख हैं। सामान्यतः निम्नांकित व्यक्ति मूल्यांकनकर्ता की भूमिका निर्वाहित कर सकते हैं–

1. विभागाध्यक्ष–सरकारी सेवाओं में विभागाध्यक्ष ही निष्पादन मूल्यांकन करता है। शेष प्रयोग निजी क्षेत्र में होते हैं।
2. कर्मचारी का निकटस्थ पर्यवेक्षक
3. उच्च स्तरी प्रबन्धक
4. सम्बन्धित कार्य का विशेषज्ञ
5. कर्मचारी के सहकर्मी
6. स्वयं कर्मचारी
7. अधीनस्थ कर्मचारी

उपर्युक्त वर्णित सभी मूल्यांकनकर्ताओं की प्रस्थितियाँ तथा भूमिकाएँ भिन्न–भिन्न हैं। अतः निष्पादन मूल्यांकन भी तद्नुसार प्रभावित होता है। विभागाध्यक्ष द्वारा मूल्यांकन का कार्य निर्बाध गति से बड़ी संख्या में कार्मिकों के लिए हो सकता है तथा किसी प्रकार के विवाद की गुंजाइश भी नहीं रहती है जबकि विशेषज्ञ द्वारा किये जाने वाले मूल्यांकन में वास्तविक कार्यक्षमताओं एवं कौशल की परख हो जाती है। सहकर्मियों द्वारा निष्पादन मूल्यांकन में

कर्मचारी के छिपे हुए गुण–दोष स्पष्टतः सामने आ जाते हैं। इसी प्रकार किसी उच्च अधिकारी का उससे निम्न कर्मचारियों द्वारा किए जाने वाला मूल्यांकन उस अधिकारी की नेतृत्व क्षमता तथा व्यवहार कुशलता को स्पष्ट करने में सहायक होता है। लोक सेवाओं में इस प्रकार के नवाचार या नौकरशाही प्रणाली के विरूद्ध प्रयोग नहीं किए जाते हैं।

5.6 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की पद्धतिया

कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की पद्धतियों पर समय, परिवेश और परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता ह। तद्नुरुप विभिन्न देशों में कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की भिन्न–भिन्न पद्धतियाँ अपनायी जाती हैं। कार्मिक प्रशासन के अन्तर्गत सामान्यतः पदोन्नतियाँ कार्य निष्पादन मूल्यांकन की पद्धति पर आधारित होती हैं। 1956 से भारत सरकार का सेवा कार्य निम्नांकित पाँच श्रेणियों में श्रेणीकरण करने की प्रणाली पर चलता रहा है–

(1) उत्कृष्ट

(2) बहुत अच्छा

(3) अच्छा

(4) संतोषजनक

(5) घटिया

इस प्रकार के श्रेणीकरण का कार्य विभागीय पदोन्नति समिति के द्वारा किया जाता है। जो कर्मचारी 'उत्कृष्ट' श्रेणी में रखे जाते हैं, उन लोगों को सामूहिक रूप से पदोन्नति दी जाती है। इसके उपरान्त बहुत अच्छा एवं अच्छा श्रेणियों का क्रम आता है।

वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन–

कर्मचारी के व्यक्तिगत कार्य का मूल्यांकन सामान्यतया उच्च अधिकारी द्वारा अधीनस्थ के सन्दर्भ में एक फार्म पर आधारित वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन के आधार पर किया जाता है। इस फार्म में प्रविष्टियाँ होती हैं जो उस व्यक्ति द्वारा किये गए कार्य का स्तर और सत्यनिष्ठा को निर्धारित करती हैं। प्रतिवेदन देने वाला अधिकारी पदोन्नति हेतु उसकी योग्यता अन्यथा के सन्दर्भ में टिप्पणी भी कर सकता है। इस प्रणाली में अस्पष्टता से बचने के लिए फार्म में पक्ष पर निर्णय करने के लिए उत्कृष्ट, औसत से अच्छा संतोषजनक और औसत से कम निर्धारित किया गया है। वरिष्ठ अधिकारी द्वारा लिखित प्रतिवेदन (रिपोर्ट) गोपनीय प्रतिवेदन होता है। जिसे पुनरीक्षण अधिकारी द्वारा लिखा जाता है और अन्त में दूसरे वरिष्ठतम् अधिकारी द्वारा पृष्ठांकित किया जाता है। हाल के वर्षों में इस प्रणाली में सुधार हुए हैं। यदि मूल्यांकन के गोपनीय प्रतिवेदन में कर्मचारी के बारे में कोई प्रतिकूल टिप्पणी होती है, तो उसे उसकी सूचना दे दी जाती है। इसका उद्देश्य कर्मचारी में सुधार की भावना विकसित करने से है। कर्मचारी को प्राधिकारी के समक्ष प्रतिकूल टिप्पणी के बारे में निवेदन करने का अवसर भी दिया जाता है। ऐसे निवेदन पर प्रतिवेदन देने वाले वरिष्ठ और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा विचार किया जाता है और आखिरी में उसके बारे में निर्णय किया जाता है। यह प्रशासकीय प्रक्रिया प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त पर आधारित है।

5.7 कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को प्रभावित करने वाले कारक

ऐसे अनेक कारक हैं जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को प्रभावित करते हैं। कुछ कारक ऐसे हैं जो व्यक्तिपरकता को प्रविष्ट कराते हैं जबकि कुछ अन्य तत्व वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन में विघ्नकारी भी होते हैं। दोनों प्रकार के कारकों पर नीचे चर्चा की गयी है–

वरिष्ठ अधिकारी का व्यक्तिगत मूल्य आग्रह–

सामान्यतया वरिष्ठ अधिकारियों को मूल्यांकन का दायित्व दिया जाता है और वे लोग अपने अधीनस्थों की रिपोर्ट लिखते हैं। सामान्यतया ऐसा देखने को मिलता है कि वरिष्ठ अधिकारी अधीनस्थों के कार्य की जांच स्वयं के व्यक्तिगत मूल्य आग्रह के आधार पर करते हैं। इस व्यक्तिपरक दृष्टिकोण का मूल्यांकन रिपोर्ट पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। ये व्यक्तिपरक दृष्टिकोण अधिकारियों के सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना से निर्मित होते हैं। इससे मूल्यांकन

प्रक्रिया में व्यक्तिपरकता का समावेश होता है। फलतः वरिष्ठ अधिकारी का निर्णय इससे प्रभावित होता है। जिससे कार्य–निष्पादन मूल्यांकन में विकृतियाँ आ जातीं हैं।

वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन के बाधक कारक–

अधीनस्थों के कार्य के वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन में अनेक तत्व अवरोधक हैं। ये कारक वरिष्ठ अधिकारी द्वारा अधीनस्थों के कार्य का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन कठिन बना देते हैं, जो निम्नांकित हैं–

(1) वरिष्ठ प्रतिवेदक अधिकारी की श्रेष्ठता की मनोग्रंथि।

(2) समग्र कार्य के मूल्यांकन के स्थान पर उच्च अधिकारी द्वारा कार्य के केवल विशेष पहलू के मूल्यांकन पर बल देना।

(3) इसमें विषयगत तत्व की प्रधानता एक गंभीर दोष है। प्रतिवेदक अधिकारी किसी कर्मचारी की प्रशंसा कर सकता और किसी ऐसे कर्मचारी की उपेक्षा भी कर सकता है।

(4) उच्चस्तर पर प्रभाव डालने की अधीनस्थ की क्षमता।

(5) प्रतिवेदक अधिकारी अधीनस्थ कर्मचारी के समग्र व्यक्तित्व के बजाय किसी एक पक्ष पर केन्द्रित हो जाते हैं।

5.8 भारत में इस सन्दभ में आयोगों की अनुशंसाएँ

प्रशासनिक सुधार आयोग ने कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के संबंध में अग्रलिखित सिफारिशें प्रस्तावित की थीं : प्रत्येक वर्ष के अन्त में जिस अधिकारी के कार्य के संबंध में टिप्पणी की जाए उसे 300 शब्दों में एक संक्षिप्त विवरण अपने बारे में देना चाहिए। इसमें उसे अपने विशिष्ट उपलब्धियों का उल्लेख करना चाहिए। वरिष्ठ अधिकारी को अधीनस्थ कर्मचारी के कार्य का मूल्यांकन करते समय उसके द्वारा प्रस्तुत विवरण पर विचार करना चाहिए और तदोपरांत ही अपना मत देकर उच्च अधिकारी को प्रेषित करना चाहिए।

- द्वितीय वेतन आयोग ने पदोन्नति की दृष्टि से चयन क्षेत्र को और सीमित कर दिया है और इस दृष्टि से केवल उन्हीं व्यक्तियों को पदोन्नत किया जाना चाहिए जिनका कार्य सर्वश्रेष्ठ, बहुत अच्छा और अच्छा हो। इस प्रकार आयोग ने संतोषजनक और खराब जैसी श्रेणियों को समाप्त कर दिया।

- प्रशासनिक सुधार आयोग ने यह भी सिफारिश की कि वार्षिक रिपोर्ट को एक अधिकारी के वर्ष के दौरान काम पर प्रकाश डालने वाले इस प्रतिवेदन को 'गोपनीय प्रतिवेदन' न कहकर कार्य–निष्पादन प्रतिवेदन की संज्ञा दी जानी चाहिए।

- आयोग ने सुझाव दिया है कि 3 अंगों का क्रम निर्धारण किया जाये। आयोग के अध्ययन दल द्वारा प्रस्तावित क्रम निर्धारण है :

  (i) बिना बारी के पदोन्नति के योग्य।

  (ii) पदोन्नति के योग्य।

  (iii) फिलवक्त पदोन्नति के योग्य नहीं।

  इन सिफारिशों को 1977 से भारत सरकार द्वारा स्वीकार कर लिया गया है।

2006 में भारत सरकार ने पदोन्नति व कार्य–निष्पादन मूल्यांकन पर अपनी नीति बनायी। इस नीति का लक्ष्य था सिविल सेवा में उत्तरदायित्व और उत्पादकता को बढ़ाना। परिवर्तित हुई पद्धति I.A.S. अधिकारियों पर लागू होती है। अभी तक सरकारी कर्मचारी के मूल्यांकन करने की पद्धति 'वार्षिक गोपनीय पंजिका' पर आधारित थी, इसके स्थान पर नई तकनीकी कार्य–मूल्यांकन पंजिका को अपनाया गया है।

5.9 सारांश

कार्मिक नीति में कर्मचारियों की पदोन्नति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कुशल एवं क्षमतावान व्यक्ति को पदोन्नति मिले यह आवश्यक है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन पद्धति के द्वारा योग्य व्यक्ति की पहचान की जाती है।

तदोपरान्त उसे पदोन्नत दी जाती है। कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा कर्मचारी की कार्यक्षमता के सुधार में सहायता मिलती है। इससे संगठन के सम्पूर्ण कार्यक्षमता में भी सुधार आता है। सरकार कार्य–निष्पादन प्रणाली का उपयोग नियन्त्रण के साधन के रूप में भी करती है। इसके द्वारा कर्मचारियों को अनुशासित करना, उन्हें प्रोत्साहित करना और कार्यकुशल बनाया जाता है। भारत में कार्य–निष्पादन मूल्यांकन प्रणाली मुख्य रूप से 'वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन' पर आधारित है। अध्ययनोंपरान्त भारत के बारे में कहा जा सकता है कि कार्य–निष्पादन मूल्यांकन पद्धति विषयपरक हो गया है। अतः अब इसे सुधारने के लिए अनेक सुधार आवश्यक है। एक युक्तियुक्त कार्य–निष्पादन मूल्यांकन प्रणाली आज अत्यन्त आवश्यक है। लोक प्रशासन में नागरिक समाज की बढ़ती भागीदारी कार्य–निष्पादन मूल्यांकन को वस्तुनिष्ठ बनाने की मांग करती है।

5.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) कार्मिक प्रशासन में कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता और महत्व की विवेचना कीजिए।

(2) कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के प्रमुख उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

(3) कार्य–निष्पादन मूल्यांकन के प्रमुख प्रविधियों को स्पष्ट कीजिए।

(4) कार्य–निष्पादन मूल्यांकन की प्रणाली पर प्रभाव डालने वाले कारकों की विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) कार्य–निश्पादन मूल्यांकन के लिए पाँच श्रेणियों में वर्गीकरण कब हुआ ?

(A) 1956

(B) 1957

(C) 1958

(D) 1959

(2) कार्य–निश्पादन मूल्यांकन प्रणाली के लिए आवश्यक है ?

(A) विषयनिष्ठ मूल्यांकन

(B) व्यक्तिपरकतापूर्ण मूल्यांकन

(C) वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन

(D) इसमें से कोई नहीं

(3) किस आयोग ने गोपनीय रिपोर्ट के स्थान पर कार्य–निश्पादन रिपोर्ट कहे जाने की अनुशंसा की ?

(A) प्रशासनिक सुधार आयोग

(B) कार्मिक मंत्रालय

(C) तृतीय वेतन आयोग

(D) पंचम वेतन आयोग

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) A (2) C (3) A

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ :–

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

खण्ड–2

कार्य परिस्थितियाँ एवं सेवा की शर्तें

इस खण्ड में कुल 3 इकाइयां हैं जो कार्मिक प्रशासन के कार्य परिस्थितियों एवं सेवा शर्तों की विभिन्न संकल्पनाओं से संबंधित हैं।

इकाई 06 वेतन प्रशासन (प्रोत्साहन तथा अन्य लाभ सम्मिलित करते हुए) : इस इकाई में सरकारी वेतन प्रणाली और इससे संबंधित विभिन्न पहलुओं पर विमर्श किया गया है। इसके अंतर्गत वेतन के सिद्धान्त, वेतन निर्धारण की पद्धतियों एवं भारत में वेतन प्रशासन के लिए अपनाए गए सिद्धांतों पर चर्चा की गयी है। साथ ही कर्मचारी की योग्यता, पद और कार्यभार के आधार पर उचित वेतन सुनिश्चित करना आवश्यक बताया गया है।

इकाई 07 आचरण एवं अनुशासन : इस इकाई के अंतर्गत कार्मिक प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। जिससे ज्ञात होता है कि कार्मिक प्रशासन में लोकसेवकों का आचरण एवं अनुशासन उच्च स्तर का होना चाहिए जिससे प्रशासनिक कार्यकुशलता, पारदर्शिता और नागरिकों के प्रति उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है। इसी क्रम में आचरण एवं अनुशासन को बनाए रखने के लिए अनुशासनात्मक कार्यवाही की परिस्थितियों एवं अनुशासनात्मक कार्यवाही के अनेक रूपों एवं अनुशासनात्मक कार्यवाही के प्रमुख कारणों को स्पष्ट किया गया है।

इकाई 08 प्रशासनिक नैतिकता एवं सरकारी सेवाओं में निश्ठा : इस इकाई के अन्तर्गत इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है कि प्रशासनिक नैतिकता और सरकारी सेवाओं में निष्ठा ये दोनों ही विषय कार्मिक प्रशासन और लोक सेवा की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह प्रभावी और पारदर्शी प्रशासनिक तंत्र का आधार है। इसी क्रम में इस इकाई के अन्तर्गत प्रशासनिक नैतिकता के व्यवहार को निर्मित करने वाले प्रमुख तत्वों एवं लोकसेवा में निष्ठा के ह्रास के कारणों की विश्लेषणपरक विवेचना की गयी है। साथ ही सरकारी सेवाओं में निष्ठा की वृद्धि के लिए सुझाव प्रस्तुत किया गया है।

इकाई–6 वेतन प्रशासन (प्रोत्साहन तथा अन्य लाभ सम्मिलित करते हुए)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 वेतन के सिद्धान्त

6.3 वेतन निर्धारण की पद्धतियाँ

6.4 कार्य मूल्यांकन की पद्धतियाँ

6.5 भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात वेतन प्रशासन के लिए अपनाए गए सिद्धान्त

6.6 भत्ते

6.7 सेवानिवृत्ति एवं पेंशन

6.8 सारांश

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

- वेतन का कार्मिक प्रशासन में क्या भूमिका है इससे अवगत होंगे।
- वेतन के क्या सिद्धान्त हैं इससे अवगत होंगे।
- भारत में स्वतंत्रता के पश्चात वेतन प्रशासन प्रोत्साहन लाभ तथा अन्य लाभों का वर्णन कर सकेंगे।

6.1 परिचय

वेतन प्रणाली का कार्मिक प्रशासन में महत्वपूर्ण स्थान है। यह वर्गीकरण के पद्धति पर आधारित है। कर्मचारी के भर्ती होने के पहले वेतन दर की अर्थपूर्ण परिभाषा कर ली जाती है। इसे देखकर नवयुवक सरकारी सेवा की ओर आकर्षित होते हैं। प्रत्येक कार्मिक को उसकी योग्यता, दायित्व, स्तर तथा परिवेश के अनुरूप वेतन दिया जाना चाहिए। किसी भी कर्मचारी के जीवन जीने का स्तर तथा उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा एक सीमा तक उसे प्राप्त होने वाले वेतन पर निर्भर करती है। व्यक्ति अपने कैरियर का चयन वेतन के प्रत्याशा के आधार पर करता है। इस इकाई में वेतन निर्धारण की चर्चा की जाएगी, साथ ही वेतन निर्धारण के सिद्धान्तों पर विमर्श किया जाएगा। भारत में वेतन प्रशासन किस प्रकार कार्य करता है इस पर भी प्रकाश डाला जाएगा।

6.2 वेतन के सिद्धान्त

लोक कर्मचारियों के वेतन मान निम्नांकित सिद्धान्तों के अनुसार निर्धारित किए जाते है–

(1) कर्मचारी की सामान्य आवश्यकताए – वेतन का सर्वमान्य सिद्धान्त यह है कि यह कर्मचारी की सामान्य आवश्यकताएँ पूरी कर सके। किसी भी कर्मचारी को इतना वेतन अवश्य ही मिलना चाहिए कि वह स्वयं तथा अपने परिवार का भरण–पोषण सहजता से कर सके। सामान्य आवश्यकताओं में भोजन, शिक्षा,

स्वास्थ्य, आवास तथा मनोरंजन आदि सम्मिलित हैं।

(2) समान कार्य के लिए सामान्य वेतन – वेतनमानों के निर्धारण में समान कार्यों के लिए सामान्य वेतन एक महत्वपूर्ण घटक है। पक्षपात के आधार पर वेतनमानों में व्यक्तिगत भिन्नता नहीं होनी चाहिए। एक ही पद पर कार्यरत दो विभिन्न कार्मिकों को लिंग, स्थान, वंश, धर्म तथा क्षेत्र के आधार पर भिन्न–भिन्न वेतन देना असंतोष को बढ़ावा देना होगा।

(3) सरकार एक आदर्श नियोक्ता के रूप में – लोक सेवकों को पर्याप्त सुविधाएँ तथा श्रेष्ठ सेवादशाएँ सरकार द्वारा उपलब्ध करवाई जानी चाहिए। लोक सेवकों को निजी क्षेत्र से ज्यादा वेतन मिलना चाहिए क्योंकि लोक सेवाएँ ऊँचे स्तर, श्रेष्ठ कार्मिक तथा व्यापक सामाजिक दायित्वों से युक्त होती हैं।

(4) देश की आर्थिक दशा – लोक कर्मचारियों के वेतन निर्धारण में देश के आर्थिक दशा का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वेतन निर्धारण के क्रम में राष्ट्रीय आर्थिक दशा को भी ध्यान में रखना चाहिए अर्थात प्रति व्यक्ति औसत आय के समानुपात में ही लोक सेवकों को वेतन दिया जाना ठीक रहता है।

(5) मूल्य–दरों में परिवर्तन – पाँचवा सिद्धान्त यह मानता है कि मूल्य–दरों में परिवर्तन के साथ वेतन भी परिवर्तित होना चाहिए अर्थात् महँगाई में वृद्धि हो तो वेतन में भी वृद्धि होनी चाहिए और यदि महँगाई कम हो तो वेतन भी कम होना चाहिए। सैद्धान्तिक रूप से भारत में वेतन संरचना महँगाई से सम्बद्ध है फलतः निरन्तर इसमें वृद्धि हो रही है।

(6) भौगोलिक परिस्थितियां – किसी स्थान विशेष की परिस्थिति इतनी भिन्न हो सकती है कि वहाँ जीवन बहुत कठिन परिस्थितियों से गुजरता हो। अतः उसी अनुरूप वेतन निर्धारित होना चाहिए।

(7) नियाक्ता की क्षमताओं के अनुरूप – नियोक्ता की क्षमताओं के अनुरूप वेतन संरचना में इस बात पर जोर दिया जाता है कि नियोक्ता के पास संसाधनों की कमी हो तो अधिक वेतन संभव नहीं है। सरकार अपने कर्मचारियों का वेतन निर्धारित करती है। क्योंकि सरकारी धन का वितरण मात्र सेविवर्ग के वेतन के लिए ही नहीं अपितु देश के समग्र विकास के लिए भी होना चाहिए।

इस प्रकार वेतन निर्धारण में कतिपय सिद्धान्तों का अनुसरण करना अपेक्षित है। वस्तुतः वेतन निर्धारण में समय, परिवेश और परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है और तद्नुरूप इसमें परिवर्तन और परिवर्द्धन परिलक्षित होता है

6.3– वेतन निर्धारण की पद्धतियां

लोक सेवकों के वेतन निर्धारण करने की विभिन्न पद्धतियाँ हैं। प्रत्येक देश वेतन निर्धारण की एक अलग पद्धति का अनुसरण करता है। यह पद्धति उस देश के संविधान की प्रकृति, प्रशासकीय प्रतिमान और लोगों के चरित्र द्वारा निश्चित होती है। इन पद्धतियों में से कुछ निम्नांकित है–

(1) वेतन विधायिका द्वारा निर्मित विधियों द्वारा निर्धारित होता है। यह प्रणाली अपरिपक्व कार्मिक व्यवस्था वाले देशों जैसे मध्य पूर्वी देशों में प्रचलित है।

(2) विधायिका व्यापक योजनाबद्ध रूपरेखा तैयार कर विस्तृत ब्यौरों का निर्धारण कार्यपालिका पर छोड़ देती है। यह स्थिति भारत में तथा अनेक संघीय शासन प्रणाली में पायी जाती है।

(3) वेतन निर्धारण का एक आयाम यह भी है कि वेतन सामूहिक समझौते या सौदेबाजी द्वारा निश्चित किए जाते हैं। यह स्थिति सभी निजी श्रम संगठनों और अधिकांश सार्वजनिक उद्यमों की है।

(4) वेतन निर्धारण की अनियोजित व्यवस्था भी सरकार द्वारा अपनाई जाती है, कहने का भाव यह है कि इसमें जब कोई नया कार्य सरकार शुरू करती है तो सामान्यतया आरम्भ में वेतन निर्धारण की कोई सुनियोजित व्यवस्था प्रयोग में नहीं लेती है, अपितु उस सेवा के अनुरूप उचित व्यवस्था समय के साथ विकसित होने के लिए छोड़ देती है। वेतन निर्धारण में कार्य मूल्यांकन प्रणाली को वैज्ञानिक पद्धति के रूप में जाना जाता है।

क्योंकि कार्य मूल्यांकन की प्रक्रिया द्वारा संगठन को न्यूनतम कार्य संपादन के लिए आवश्यक निवेश की जानकारी प्राप्त होती है।

6.4– कार्य मूल्यांकन की पद्धतियाँ

आज नवीन लोक प्रबन्धन के दर्शन के कारण कार्य मूल्यांकन का महत्व और बढ़ गया है। शासकीय और निजी क्षेत्र की सहक्रिया में वृद्धि हो रही है। आर्थिक और प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों ने आधुनिक प्रशासनिक पद्धति को गहराई से प्रभावित किया है। कार्य मूल्यांकन की दो पद्धतियाँ है, जिनका प्रयोग सामान्यतया संगठनों द्वारा किया जाता है–

अविश्लेषणात्मक पद्धति :–

अविश्लेषणात्मक पद्धति पदसोपानयुक्त पदानुक्रम स्थापित करती है और साथ ही गैर संख्यात्मक होती है। जबकि विश्लेषणात्मक पद्धति संख्यात्मक होती है और किसी न किसी संख्यात्मक रूप में वर्णित की जा सकती है। ध्यातव्य है, छोटे संगठन विश्लेषणात्मक पद्धतियों के अपेक्षा अविश्लेषणात्मक पद्धतियों को श्रेष्ठ मानते हैं जबकि बड़े–बड़े संगठनों द्वारा विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया जाता है।

कार्य को श्रेणीबद्ध करना सभी कार्यों की तुलना करने की एक प्रत्यक्ष पद्धति है। जिसके द्वारा महत्वपूर्ण कार्यों को क्रम में वर्गीकृत किया जाता है। इसमें विभिन्न कार्यों को सापेक्षिक महत्व के क्रम में सूचीबद्ध किया जाता है। इसमें संगठनात्मक चार्ट के आधार पर कार्यों को श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसमें उच्चतम तथा निम्नतम कार्यों का निर्देश चिन्ह अपनाया जाता है। इस पद्धति की मुख्य कमी यह है कि यह व्यक्तिपरक होती है और इसमें कार्यों का कोई मापदण्ड नहीं होता है। परिणामतः श्रेणीबद्ध करने वालों की आधारभूत मान्यताओं का परीक्षण नहीं किया जा सकता है।

कार्य वर्गीकरण पद्धति :–

इस पद्धति में हम पदानुक्रम संरचना के प्रत्येक तल से एक या दो कार्यों का चयन करते हैं और इन कार्यों की जिम्मेदारियों, कर्तव्यों तथा अपेक्षाओं का मानक विवरण तैयार करते हैं। चयन किए गए इन कार्यों को मूल्य कार्य की संज्ञा दी जाती है।

(2) विश्लेषणात्मक पद्धति – विश्लेषणात्मक पद्धति संगठनात्मक होती है। फलतः उन्हें संख्यात्मक रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता है।

(A) संतुलित पाइन्ट आकलन – इसमें मूल्यांकित किए जाने वाले कार्यों के कई एक जैसे घटकों का विश्लेषण किया जाता है इसके बाद प्रत्येक घटक के पैमाने के अनुसार प्रत्येक कार्य का मूल्यांकन प्रत्येक घटक के मापक्रम के साथ किया जाता है।

(B) घटक तुलना पद्धति –

इस पद्धति की निम्नांकित विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(1) कार्यों के लक्षणों का चयन करना।

(2) प्रत्येक कार्य कारक के लिए मापक्रम बनाना।

(3) मापदण्ड के अनुसार सभी कार्यों का मापन करना।

(4) चयनित मुख्य कार्यों के लिए वेतन सर्वेक्षण करना।

(5) वेतन संरचना का प्रारूप बनाना।

(6) वेतन संरचना का समायोजन एवं संचालन करना।

6.5 भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात वतन प्रशासन के लिए अपनाए गए सिद्धान्त

सामान्यतः भारत में वेतन प्रशासन के सिद्धान्तों और उद्देश्यों की अपेक्षा तकनीकों तथा प्रक्रियाओं पर अधिक जोर दिया जाता है। वेतन प्रशासन के निम्नांकित सिद्धान्त हैं :

(1) कार्य मूल्यांकन वैज्ञानिक रूप से सरल समझे जाने योग्य होना चाहिए।

(2) कार्य मूल्यांकन तथा प्रतिकार योजनाएँ दोनों एक–दूसरे से पृथक और स्पष्ट होनी चाहिए।

(3) कार्य मूल्यांकन तथा प्रतिकार योजनाएँ दोनों उदार होनी चाहिए जिससे स्थानीय श्रम परिस्थितियों की विशिष्टताएँ समाहित की जा सकें।

(4) वेतन प्रशासन योजना संगठन की प्रकृति और उसके लक्ष्यों के अनुरूप होनी चाहिए।

(5) वेतन प्रशासन योजना अन्य प्रशासकीय प्रक्रियाओं में बाधक होने की अपेक्षा उन्हें सरल और गतिशील बनाने वाली होनी चाहिए।

(1) प्रथम वेतन आयोग द्वारा वेतन निर्धारण – भारत में तत्कालीन संघीय न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्रीनिवास वरदाचारियर की अध्यक्षता में प्रथम वेतन आयोग नियुक्त किया गया था। इस वेतन आयोग ने 1949 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में यह टिप्पणी की थी कि यह वर्गीकरण अनुशासनात्मक कार्यों तथा अपील के अधिकार से सम्बद्ध है। वेतन आयोग ने अधीनस्थ के रूप सेवाओं के वर्णन पर इस आधार पर आपत्ति की कि यह शब्दावली अपमानजनक है। इसके स्थान पर वर्ग–3 तथा वर्ग–4 सेवाओं की शब्दावली स्थापित करने की अनुशंसा की।

(2) द्वितीय वेतन आयोग की अनुशंसाएं – द्वितीय वेतन आयोग द्वारा वर्ष 1959 में प्रस्तुत प्रतिवेदन में की गयी अनुशंसाओं के अनुसार वर्ग–2 के लिए एकाकी मानक वेतनमान स्वीकार किया गया। वर्ग–3 में वेतनमान एवं श्रेणियाँ और भी अधिक संख्या में की गयी। लिपिकीय कर्मचारी वर्ग के लिए चार सुपरवाइजर ग्रेड तथा तीन अन्य जैसे उच्च श्रेणी लिपिक, निम्न श्रेणी लिपिक तथा आशुलिपिक के ग्रेड किये गये। केन्द्रीय सचिवालय में सम्पूर्ण पदानुक्रम को सचिव, अपर सचिव, सह सचिव, उपसचिव, अवर सचिव, खंड अधिकारी, सहायक उच्च श्रेणी लिपिक तथा निम्न श्रेणी लिपिक को नौ श्रेणियों में विभाजित किया गया।

(3) तृतीय वेतन आयोग की अनुशंसाएँ – सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश श्री रघुबर दयाल की अध्यक्षता में 23 अप्रैल 1970 को भारत सरकार द्वारा गठित तृतीय वेतन आयोग ने अपनी रिपोर्ट दो खंडों में 1973 में प्रस्तुत की। इस आयोग को उन सिद्धान्तों पर विचार करना था जिसके अनुसार केन्द्र सरकार के कर्मचारियों की सेवा शर्तें और वेतनमान का ढाँचा शासित हो। इस वेतन आयोग को सशस्त्र बलों तथा अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों के लिए मृत्यु अथवा सेवानिवृत्ति पर मिलने वाले लाभों के ढाँचे पर विचार करना था। आयोग का प्रमुख प्रयास 500 से अधिक वेतनमानों को तर्कसंगत करके 80 तक घटाना और इस प्रक्रिया में कर्मचारियों के विभिन्न वर्गों को अच्छे वेतनमान देना था। आयोग ने वेतनमानों के अन्तर को कम करने के लिए न्यूनतम वेतनमान 185 रु प्रतिमाह तक बढ़ाया। जिसके पश्चात् 1 जनवरी 1970 को अधिकतम और न्यूनतम वेतन के अन्तर का अनुपात 15 : 4 से घटकर 11 : 8 हो गया।

(4) चतुर्थ वेतन आयोग की अनुशंसाएँ – न्यायमूर्ति श्री पी0 एन0 सिंघल की अध्यक्षता में जुलाई 1983 में चतुर्थ वेतन आयोग का गठन हुआ। आयोग ने वेतन तथा सेवा शर्तों के मौजूदा संरचना का परीक्षण किया। साथ ही आयोग ने केन्द्रीय सरकार के सभी कर्मचारियों, अखिल भारतीय सेवा कार्मिकों, संघशासित क्षेत्रों के कर्मचारियों और सशस्त्र बल के कार्मिकों को प्राप्त हो रहे अन्य लाभों का भी परीक्षण किया। चतुर्थ वेतन आयोग ने वेतनमानों की संख्या 153 से घटाकर 36 कर दी जो एक श्रेष्ठ कदम था।

(5) पंचम वेतन आयोग – पांचवे वेतन आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति एस0 रत्नावेल पांडियन थे। 9 अप्रैल 1994 को पांचवें वेतन आयोग के स्थापना के सन्दर्भ में अधिसूचना जारी की गई थी। परन्तु सदस्य सचिव द्वारा कार्यभार ग्रहण करने के साथ ही 2 मई 1994 को कार्य करना प्रारम्भ किया। इस आयोग ने सरकारी कार्यबल को लगभग 30% कम करने की अनुशंसा की।

(6) भारत का छठा केंद्रीय वेतन आयोग – छठे केंद्रीय वेतन आयोग का गठन 2006 में किया गया था। सेवानिवृत्त न्यायमूर्ति बी0एन0 श्रीकृष्णा इसके अध्यक्ष थे। छठें वेतन आयोग ने केन्द्र सरकार को 24 मार्च 2008 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिस की मुख्य अनुशंसाएँ निम्नांकित थी–

(1) पूर्ववर्ती वेतनमानों की संख्या को घटाते हुए पे–बैण्ड एवं ग्रेड पे का प्रावधान। पूर्व की 35 ग्रेडों की संख्या कम करके 20 की।

(2) न्यूनतम पे–बैण्ड 4860 तथा ग्रेड पे 1800 रूपया।

(3) अधिकतम वेतन 90000 रूपया निश्चित। सैन्य प्रमुख एवं कैबिनेट सचिव का वेतन समान करने की अनुशंसा।

(4) सभी मामलों में वार्षिक वेतन वृद्धि 1 जुलाई से लागू करने की अनुशंसा।

(5) प्रसूति अवकाश 3 माह की बजाय 6 माह।

(6)– पेंशन अंतिम वेतन औसत परिलब्धियों का 50 प्रतिशत अथवा जो भी अधिक हो 80 वर्ष से अधिक उम्र वाले सेवानिवृत्त कार्मिकों के लिए विशिष्ट पेंशन वृद्धि की जाये।

केन्द्र सरकार ने छठे वेतन आयोग की अनुशंसा को 14 अगस्त, 2008 को स्वीकार किया एवं बढ़े हुए वेतनमान 1 जनवरी, 2006 से तथा पुनरीक्षित भत्ते 1 सितम्बर 2008 से दिए जाने का निर्णय लिया।

(7) सातवां केन्द्रीय वेतन आयोग – सातवाँ वेतन आयोग 2014 में गठित किया गया। सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत्त न्यायमूर्ति श्री अशोक कुमार माथुर की अध्यक्षता में 7वें वेतन आयोग का गठन हुआ। 7वें वेतन आयोग ने अपनी रिपोर्ट 19 नवम्बर 2015 को प्रस्तुत की एवं केन्द्र सरकार ने इसे 1 जनवरी 2016 से लागू किया।

इस आयोग ने छठे वेतन आयोग के पे–बैण्ड तथा ग्रेड–पे के प्रयोग को समाप्त कर इन दोनों का संयुक्तिकरण कर 18 पे मैट्रिक्स लेवल बनाए। फलतः पूर्ववर्ती 31 वेतनमानों की संख्या घटकर 18 रह गयी। प्रत्येक लेवल वेतनमान से 3% वार्षिक वेतन वृद्धि प्रस्तावित की। पुराने वेतनमान को नए वेतनमान में बदलने हेतु 2.57 से गुड़ा करने हेतु फिटमेण्ट फैक्टर तय किया गया। आयोग ने केन्द्र सरकार के विभिन्न विभागों में प्रवर्तित 196 प्रकार के भत्तों में से 52 को पूर्णतया समाप्त करने तथा 36 को समाप्त करने या तर्कसंगत ढंग से परिवर्तित (अन्य भत्तों में मिलने) करने की अनुशंसा की। इन भत्तों में बाल कटवाने, परिवार नियोजन, साबुन, झोपड़ी, चश्मा, अंतिम संस्कार तथा सत्कार भत्ता इत्यादि सम्मिलित हैं। नए वेतनमान (मैट्रिक्स) प्रतिवर्ष 10 वर्ष पर समीक्षा की जाए। सुनिश्चित कैरियर प्रगति (10, 20, 30 वर्ष पर पदोन्नति) हेतु 'Very good' वार्षिक कार्य मूल्यांकन होना चाहिए।

6.6– भत्ते

भारत में लोक सेवकों को उनके कार्य, पद तथा सेवा–शर्तों के अनुरूप भत्ते दिए गए हैं जो वेतनमान से ही सम्बद्ध रहते हैं। भत्तों में केन्द्र तथा राज्य सेवाओं के अनुसार अन्तर पाया जाता है। लोक सेवकों को देय प्रमुख भत्तों का विवरण इस प्रकार है–

(1) महंगाई भत्ता – कीमतों में वृद्धि तथा राष्ट्रीय थोक सूचकांक महंगाई भत्ता (D.A.) बढ़ाया जाता है। निम्न पदों पर यह भत्ता अधिक होता है तथा उच्च पदों पर इसका प्रतिशत कम होता है। मँहगाई भत्ता वेतन का एक हिस्सा होता है। महँगाई के प्रभाव को कम करने के लिए सरकार महँगाई भत्ता देती है।

(2) मकान किराया भत्ता – घर किराया भत्ता (एच0आर0ए0) एक कर्मचारी के वेतन का एक अनिवार्य भाग है, जो नियोक्ता द्वारा किराए की आवास की लागत को कवर करने के लिए दिया जाता है। कर्मचारियों को यह भत्ता उनके कार्यस्थल (महानगर, शहर, कस्बा या गाँव) के आधार पर उसके वेतनमान के आधार पर दिया जाता है। यदि कर्मचारी सरकारी आवास में रहता है तो यह भत्ता देय नहीं होता है।

(3) यात्रा भत्ता – सरकारी कार्य से जब किसी कर्मचारी को बाहर जाना होता है तो वह नियमानुसार यात्रा भत्ता (T.A.) पाने का अधिकारी होता है। यात्रा का साधन तथा श्रेणी कार्मिक के पद तथा वेतनमान के

आधार पर निर्धारित होता है।

(4) **दैनिक भत्ता** – सरकारी यात्रा के दौरान कार्मिक की भोजन, निवास तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो भत्ता दिया जाता है, उसे दैनिक भत्ता कहते हैं।

(5) **अवकाश यात्रा भत्ता** – अवकाश यात्रा (L T C Leave) सुविधा का यह तात्पर्य है कि इस सुविधा के अन्तर्गत सरकारी सेवकों को अवकाश के दौरान भारत में स्थित किसी स्थान के भ्रमण के लिए जाने तथा वापस आने के सम्बन्ध में लोक सेवकों एवं उनके परिवार के सदस्यों द्वारा की गई यात्राओं के लिए कतिपय शर्तों के अन्तर्गत व्यय की प्रतिपूर्ति अवकाश यात्रा भत्ता के द्वारा किया जाता है।

(6) **अन्य भत्त** – शैक्षणिक सुविधा के लिए कनिष्ठ कर्मचारियों को बच्चों की शिक्षा के लिए भत्ता मिलता है। पर्वतीय तथा ठण्डे क्षेत्रों में विशिष्ट भत्ता मिलता है। स्वास्थ्य सेवाओं की सुविधा हेतु चिकित्सा व्यय का एक निश्चित भत्ता दिया जाता है। परियोजना क्षेत्रों में 'परियोजना भत्ता' मिलता है। संकटग्रस्त रोगों की स्थिति में कार्य करने वाले कार्मिकों को 'जोखिम भत्ता' दिया जाता है।

6.7 सेवानिवृत्ति एवं पेंशन

सरकारी सेवा में यदि नियुक्ति हुई है तो सेवानिवृत्ति भी अवश्यम्भावी है। सामान्यतः लोक सेवाओं में युवा व्यक्ति प्रवेश करते हैं तथा एक लंबी अवधि तक सेवा करते–करते वृद्धावस्था की ओर अग्रसर होने लगते हैं। संगठन की कार्यकुशलता बनाए रखने के लिए युवाओं को प्रवेश देने तथा पदोन्नति की प्रतीक्षा में बैठे अधीनस्थ कार्मिकों को अवसर प्रदान करने के लिए लोक सेवकों की सेवानिवृत्ति आवश्यक होती है।

(1) **अनिवार्य सेवानिवृत्ति** – इस श्रेणी में अधिवार्षिकी पेंशन, रिटायरिंग पेंशन तथा अनुशासनात्मक कार्यवाही के अन्तर्गत की गई दण्डात्मक प्रक्रिया के रूप में सेवानिवृत्ति दी जाती है। असमर्थता तथा अन्य कारणों से भी अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह स्पष्ट किया जा चुका है कि सरकार ऐसे किसी भी कार्मिक को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्ति कर सकती है जिसका आचरण सार्वजनिक सेवा की कार्यकुशलता, क्षमता एवं प्रभावकारिता में गतिरोध उत्पन्न करता हो।

(2) **स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति** – जो सेवानिवृत्ति स्वेच्छा से स्वीकार की जाती है उसे स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति कहते हैं। इस श्रेणी की सेवानिवृत्ति स्वैच्छिक होते हुए भी कई बार अनिवार्य सी हो जाती है। पाँचवें वेतन आयोग ने 'गोल्डेन हैण्ड शेक' योजना के अन्तर्गत लोक सेवा के कर्मचारियों की छँटनी करने की सिफारिश की थी। इसी क्रम में सन् 1988 से केन्द्रीय लोक उपक्रमों में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना (VRS) लागू है। ऐसी योजना के अन्तर्गत सरकार सेवानिवृत्ति लेने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करती है। ऐसे में बहुधा अनुग्रह राशि एवं अन्य लाभ बढ़ा दिए जाते हैं। किसी विभाग के बन्द होने या अधिशेष कर्मचारियों की छँटनी करने पर योजना प्रस्तावित की जाती है।

भारत में सेवानिवृत्ति की आयु सामान्यतः 58–60 वर्ष है कुछ प्रकरणों में कम या अधिक हो सकती है। पाँचवें वेतन आयोग ने सेवानिवृत्ति आयु 58 से बढ़ाकर 60 वर्ष करने की अनुशंसा की थी, जिसे केन्द्र सरकार ने सन् 1998 में स्वीकार कर लिया है।

सेवानिवृत्ति के लाभ :–

सेवानिवृत्ति कर्मचारी सुखी जीवन व्यतीत कर सके इसके लिए नियोक्ता द्वारा कुछ आर्थिक लाभ प्रदान किये जाते हैं। इसकी पृष्ठभूमि में ये मान्यताएँ काम करती हैं–

(1) यह नियोक्ता द्वारा अपने विश्वस्त कर्मचारियों के प्रति उदारता का प्रकटीकरण है।

(2) यह अच्छे कार्य का पुरस्कार एवं सामाजिक सुरक्षा है।

(3) यह व्यवस्था अनुभवी व्यक्तियों को संगठन में बनाए रखने एवं पदोन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है।

(4) यह संगठन में नये युवा व्यक्तियों को आकर्षित करती है।

पेंशन :–

पेंशन से तात्पर्य– ''निश्चित शर्तों को पूरा करने पर मिलने वाले नियमित भुगतान से है जो कर्मचारी या उसके परिवार को देय होता है।'' भारतीय प्रशासन में बजट का बड़ा भाग कार्मिकों के वेतन–भत्तों तथा पेंशन पर व्यय हो रहा है। बजट वर्ष 2023–24 में पेशन के मद में 234359 करोड़ रुपए व्यय होगा। वित्तीय प्रशासन में भारत सरकार की राजस्व प्राप्तियों का लगभग 9% पेंशन पर व्यय होता है।

राष्ट्रीय पेंशन व्यवस्था :–

भारत में लोक सेवकों की पेंशन प्रणाली का संस्थागत ढाँचा स्थापित करने, पेंशन निधियों के लिए निवेश के लिए निवेश हेतु मार्गदर्शन देने और इससे संबंधी विधिक कार्यवाही करने हेतु 23 अगस्त 2003 की अधिसूचना के पश्चात् 1 अप्रैल, 2004 में पेंशन फण्ड नियामक एवं विकास प्राधिकरण (PERDA) कार्यरत है। पेंशन फण्ड नियामक विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2013 (PERDA) के पश्चात् जनवरी 2014 से देश में राष्ट्रीय पेंशन व्यवस्था लागू की गई जिसका प्रमुख उद्देश्य ऐसी स्वैच्छिक तथा अंशदायिनी सेवानिवृत्ति बचत योजना देना है ताकि सेवानिवृत्ति से संबंधित व्यक्ति को एक निश्चित राशि मिलती रहे।

राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली भारत सरकार द्वारा शुरू की गई एक परिभाषित अंशदायी पेंशन है। 1 जनवरी 2004 से केन्द्र सरकार के सभी कर्मचारियों के लिए यह अनिवार्य है। इस प्रकार सन् 2004 के बाद केन्द्र एवं राज्य सरकारों के कार्मिक भी नई व्यवस्था में अपना अंशदान (नियोक्ता तथा कार्मिक दोनों) जमा कराते हैं और इसे नयी पेंशन योजना या N.P.S. कहा जाता है जो कि पूर्ववर्ती गैर अंशदायिनी पेंशन से भिन्न है। योजना में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति को PRAN अर्थात् स्थायी सेवानिवृत्ति खाता नम्बर दे दिया जाता है तथा सेवानिवृत्ति पर जमा राशि का एक भाग नकद तथा शेष को जीवन भर पेंशन की तरह दिया जाता है।

6.8 सारांश

सामान्यतः कहा जा सकता है कि वेतन एवं पेंशन व्यवस्था कार्मिक प्रशासन की गुणवत्ता के लिए वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होना चाहिए। जिससे यह प्रतिभावना युवाओं को अपनी ओर आकर्षित कर सके। निजी क्षेत्र में आकर्षक वेतन के कारण लोक सेवाओं में वेतन एवं पेंशन व्यवस्था को तर्कसंगत बनाए जाने की आवश्यकता है। लोकसेवा को समय के चुनौतियों का समाधान करना होता है, इसके लिए उन्हें कठिन परिश्रम करना होता है ऐसे में वेतन प्रणाली उसके व्यक्तित्व विकास में सहायक होनी चाहिए। एक तार्किक न्यायसंगत वेतन प्रणाली लोक सेवाओं के कर्मचारियों को सत्यनिष्ठापूर्ण आचरण करने के लिए प्रेरित करती है। कार्मिक प्रशासन के लिए वेतन प्रणाली एक आधार स्तम्भ है।

अतः प्रतिकर योजना एवं वेतन संरचना के घटकों का समय–समय पर सरकार द्वारा समीक्षा की जानी चाहिए। इसके साथ सारतः यह कहना भी जरूरी है कि प्रशासकीय व्यवस्था की दक्षता मात्र सिविल सर्विस की निष्ठा एवं समपर्ण से ही बढ़ाई जा सकती है।

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) वेतन निर्धारण के प्रमुख सिद्धान्तों को स्पष्ट कीजिए।

(2) वेतन निर्धारण की प्रमुख पद्धतियों को स्पष्ट कीजिए।

(3) भारत में वेतन प्रशासन के सुदृढ़ीकरण के लिए बने आयोगों के उल्लेखनीय अनुशंसाओं की विवेचना कीजिए।

(4) सेवानिवृत्ति एवं पेंशन का वेतन प्रशासन में क्या महत्व है स्पष्ट कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) भारत के प्रथम वेतन आयाग ने अपनी रिपोर्ट कब प्रस्तुत की ?

(A) 1949

(B) 1950

(C) 1951

(D) 1952

(2) 'गोल्डेन हैण्ड शक' योजना की अनुशंसा किस आयोग ने को थी ?

(A) प्रथम वेतन आयोग

(B) द्वितीय वेतन आयोग

(C) चतुर्थ वेतन आयोग

(D) पंचम वेतन आयोग

(3) राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (N.P.S.) कब लागू हुआ ?

(A) सन् 2003

(B) सन् 2004

(C) सन् 2005

(D) सन् 2006

(4) स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना कब लागू की गई ?

(A) 1997

(B) 1998

(C) 1999

(D) 2000

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) A **(2)** D **(3)** B **(4)** B

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई–7 आचरण एवं अनुशासन

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 परिचय

7.2 कार्मिक प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन की भूमिका

7.3 अनुशासनात्मक कार्यवाही की परिस्थितियाँ

7.4 अनुशासनात्मक कार्यवाही के अनेक रूप

7.5 आचरण नियमावली के अन्तर्गत आने वाले विषय

7.6 अनुशासनिक कार्यवाही की अवधारणा

7.7 अनुशासनात्मक कार्यवाही के प्रमुख कारण

7.8 अनुशासन परीक्षण के सन्दर्भ में भारत का संविधान

7.9 अनुशासनात्मक कार्यवाही में निहित क्रमिक चरण

7.10 सारांश

7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- कार्मिक प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन के महत्व पर विमर्श कर सकेंगे।
- आचरण के नियमों से आच्छादित विषयों को जान पायेंगे एवं साथ ही अनुशासनिक कार्यवाही की अवधारणा को जान सकेंगे।
- भारतीय परिप्रेक्ष्य में लोक सेवा के कर्मचारियों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही को समझ सकेंगे।
- सुशासन के लिए अनुशासनात्मक कार्यवाही क्यों आवश्यक वर्णन कर सकेंगे।

7.1 परिचय

सरकारी और निजी दोनों प्रकार के संगठनों में कार्मिकों के व्यवहार एवं आचरण को नियंत्रित करने के लिए नियम बनाए जाते हैं। मानव अपने स्वभाव से ही गुणों एवं दोषों का सम्मिश्रण होता है। संगठन अपने लक्ष्यों को सुचारू रूप से प्राप्त कर सके इसके लिए आचरण एवं अनुशासन की एक निर्धारित संहिता होनी चाहिए। प्रशासनिक कार्य में कुशलता लाने के लिए तथा प्रशासकीय व्यवहार के सफल संचालन के लिए किसी भी संगठन में आचरण एवं अनुशासन का होना अत्यन्त आवश्यक है। सरकार यदि अपने कर्मचारियों को आकर्षक वेतन और सेवा शर्तें प्रदान करती है, तो वह उन कर्मचारियों से अपेक्षा भी करती है कि वे अनुशासित रहें। वर्तमान में अनुशासनहीनता की समस्या प्रायः सभी संगठनों में देखने को मिलती है। अतः संगठन के नियमों की अवहेलना करने वाले को दण्डित किया जाता है। सरकारी कार्मिकों के व्यवहार को नियंत्रित और नियमित करने के लिए आचार–संहिता की रचना की जाती है। सरकार कर्मचारी समाज के लिए सरकारी सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं तथा समाज के साथ उनका समीप का संबंध होता है। फलतः सरकारी कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह आचरण के उच्च नैतिक मानदंड प्रस्तुत करें। आज राज्य की भूमिका बहुआयामी हो गयी है, लोक कल्याणकारी एवं सुविधाप्रदानक राज्य के रूप में विकास एवं सार्वजनिक प्रबन्ध के मामलों में इसकी भूमिका दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। सरकारी कर्मचारियों

के दायित्वों और अधिकारों में निरन्तर वृद्धि के साथ प्रशासनिक अकुशलताएँ जैसे लालफीताशाही, कार्य को टालने की प्रवृत्ति और भ्रष्टाचार आदि भी प्रशासन में अपना स्थान बना लिए हैं। लोकतंत्र की सफलता तथा विकास संबंधी कार्यक्रमों का क्रियान्वयन इससे संलग्न सरकारी कर्मचारियों पर निर्भर करता है। यदि सरकारी कर्मचारी कदाचार और अनुशासनहीनता से ग्रस्त हो गए तो प्रशासकीय तन्त्र ही धराशायी हो जायेगा।

7.2 कार्मिक प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन की भूमिका

सिविल सेवक सार्वजनिक अधिकारी हैं जो सरकार के नियन्त्रण में कार्य करते हैं और सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों के प्रशासन से सम्बन्धित अधिकार और दायित्व रखते हैं। परिणामस्वरूप उन्हें अत्यधिक निपुणता, सत्यनिष्ठा और उत्तरदायित्व के उच्च स्तर को बनाए रखने की आवश्यकता होती है। इन जिम्मेदारियों को निभाने के लिए आचरण की नियमावली और अनुशासन महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। अनुशासन यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि लोक सेवक अपने आचरण से संबंधित नियमों और विनियमों का अनुसरण करें। सरकारी कर्मचारी जो अपने काम में अनुशासित होते हैं, उनके प्रभावी, कुशल और जनमानस की आवश्यकताओं के प्रति उत्तरदायी होने की संभावना अधिक होती है। यह भ्रष्टाचार, अक्षमता और कदाचार को रोकने में एक–एक उपकरण के रूप में कार्य करता है। यह सिविल सेवकों को व्यवसायिकता, सत्यनिष्ठा, उत्तरदायित्व के उच्च मानकों को स्थापित करने और नैतिक एवं सुशासन में सहायता करने वाले विश्वास निर्माण में सहायता प्रदान करता है। आज सरकारें नागरिक–केंद्रित प्रशासन पर जोर दे रही हैं। इसके लिए उत्तरदायित्व, लोगों तक सेवाओं की पहुँच, पारदर्शिता, जन सहभागिता, प्रभावशालीता एवं दक्षता लोक सेवकों में जरूरी है और ये सारे तत्व आचरण एवं अनुशासन की मांग करते हैं। इस प्रकार कार्मिकों का व्यवहार उन्हें नियन्त्रण के अधीन लाना तथा उन्हें आज्ञा–पालन और सुव्यवस्था के लिए प्रशिक्षित करना आचरण एवं अनुशासन में निहित है। सारतः एक निर्दोष कार्मिक व्यवस्था के निर्माण के लिए आचरण एवं अनुशासन अनिवार्य साधन है।

7.3 अनुशासनात्मक कार्यवाही की परिस्थितियाँ

संगठन या प्रशासन में अनुशासन की स्थापना अनिवार्य है। इस क्रम यह विमर्श आवश्यक है कि वे कौन–कौन सी परिस्थितियाँ हैं जिनमें अनुशासनात्मक कार्यवाही आवश्यक हो जाती है।

प्रो.एल.डी. ह्वाइट न अनुशासनात्मक कार्यवाहियों की निम्नलिखित परिस्थितियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है :

- कर्तव्य–पालन की ओर ध्यान न देना, आलस्य, कार्य के प्रति असावधानी तथा कामचोरी करना।
- अकार्यकुशलता का प्रदर्शन।
- विधि का उल्लंघन करना तथा नियमों का विरोध करना।
- अनैतिकता, उन्माद एवं भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देना।
- सत्यनिष्ठा का अभाव अर्थात् सरकारी कर्मचारियों के लिए स्वीकृत नैतिक नियमों की अवहेलना करना।
- संज्ञानात्मक रूप से किसी कानून को लागू करने से मना करना।

कुछ ऐसे राष्ट्र–राज्य हैं जहाँ सरकारी कर्मचारियों पर सशक्त नियन्त्रण रखें जाते हैं, वहाँ अनुशासनात्मक कार्यवाहियों की परिस्थितियों को भी अधिक व्यापक बनाया जाता है, लेकिन जहाँ उदार नियन्त्रण के सिद्धान्त को मान्यता दी गयी है वहाँ नियंत्रण की परिस्थितियाँ अपेक्षाकृत कुछ कम है।

7.4 अनुशासनात्मक कार्यवाही के अनेक रूप

संगठन में अनुशासन बनाये रखने के लिए कुछ ऐसे प्रावधान करने होते हैं जिन्हें कर्मचारियों द्वारा की जाने वाली अनुशासनहीनता की स्थिति में प्रयोग में लाया जा सके। अनुशासन की कार्यवाहियों के विभिन्न रूपों का वर्णन निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

(1) **चेतावनी देना**– उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा अनुशासनहीनता का कार्य करने पर उन्हें जवाब–तलब करता है तथा चेतावनी देकर छोड़ देता है। यह अनुशासनपरक कार्यवाही का अलिखित रूप है और अधिकांशतः सामान्य मामलों में इसी से काम चलाया जाता है।

(2) **कार्य दायित्व में परिवर्तन करना**– अनुशासनहीनता का प्रदर्शन करने वाले कर्मचारी को ऐसे कार्य से सम्बद्ध कर दिया जाय जिसे वह नापसन्द करता हो अर्थात् जो अपेक्षाकृत कम महत्व का जटिल कार्य हो।

(3) **सेवा अभिलेख में मूल्यांकन**– इसमें कर्मचारी के सेवा अभिलेख में अनुशासनहीनता की बात लिखित रूप में दर्ज कर दिया जाता है, जिसके मूल्यांकन के परिणामस्वरुप उसकी पदोन्नति रुक जाती है।

(4) **वार्षिक वेतन–वृद्धि रोकना**– अपने निम्नतम वेतनक्रम से उच्चतर वेतनक्रम की ओर बढ़ने के लिए सरकारी कर्मचारी को वार्षिक वेतन–वृद्धि दी जाती है। अनुशासनिक कार्यवाही के रूप में उसे मिलने वाली इस वार्षिक वृद्धि को सक्षम अधिकारी द्वारा रोक दिया जाता है।

(5) **पदोन्नति रोकना** :– इसमें निर्धारित पदोन्नति पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। पदोन्नति को रोका जाना अनुशासन पर कार्यवाही का एक कठोर कदम माना जाता है तथा यह कर्मचारियों में भय उत्पन्न करता है।

(6) **स्थानान्तरण करना**– अनुशासनहीनता के आरोप में संबंधित कर्मचारी का स्थानान्तरण किसी ऐसे क्षेत्र में कर दिया जाता है जहाँ उसके लिए नाना प्रकार की समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं।

(7) **पदावनति करना**– कर्मचारियों पर अनुशासनात्मक कार्यवाही करने के लिए पदावनति का भी प्रयोग किया जाता है। इसमें कार्यरत कर्मचारी को उसके ऊपर के पद की ओर उन्नत करने के स्थान पर निम्न पद पदावनत कर दिया जाता है।

(8) **निर्धारित समयावधि के लिए पद विमुक्ति**– इसके अन्तर्गत अनुशासन भंग करने पर कर्मचारी को एक वर्ष, दो वर्ष या इससे कम अवधि के लिए सेवा से मुक्त कर दिया जाता है तथा उस अवधि की अनेक सुविधाएँ उसे नहीं दी जाती हैं।

(9) **पद से मुक्ति**– अनुशासन तोड़ने के आरोप में कर्मचारी को सेवा से मुक्त कर दिया जाता है और उसे सेवा से तब तक मुक्त रखा जाता है जब तक उसके विरुद्ध अनुशासन भंग के आरोप पर निर्णय न हो जाये। ऐसी दशा में यदि निर्णय कर्मचारी के पक्ष में होता है तो उसे पुनः सेवा में ले लिया जाता है अन्यथा मुक्त कर दिया जाता है।

(10) **फौजदारी कार्यवाही**– गम्भीर अपराध की स्थिति में कर्मचारी के विरुद्ध फौजदारी कार्यवाही और न्यायिक कार्यवाही भी की जाती है।

(11) **सेवा में स्थायी पदच्युत**– न्यायालय में यदि कर्मचारी का अपराध सिद्ध हो जाता है अनुशासनात्मक कार्यवाही के रूप में उसे सेवा से निष्कासित कर दिया जाता है।

7.5 आचरण नियमावली के अन्तर्गत आने वाले विषय

लोक–सेवक/सरकारी कर्मचारी सरकार के कार्यकारी अंग होते हैं। यदि लोक–सेवक अपने अराजकतापूर्ण व्यवहार, भ्रष्टाचार, लूट–खसोट, भाई–भतीजावाद तथा पक्षपातपूर्ण व्यवहार को जनता के सामने रखेंगे तो यह उस सरकार के छवि के लिए हानिकारक सिद्ध होगा। संक्षिप्त रूप से निम्नांकित कारणों से कर्मचारियों के लिए आचार–संहिता नियमों की आवश्यकता होती है–

(1) एक स्पष्ट आचार–संहिता के अभाव में कर्मचारियों के कर्तव्य विमुख होने, भ्रष्टाचार में लिप्त होने तथा प्रशासकीय व्यवहार का अनादर करने की संभावना बनी रहती है।

(2) आचार–संहिता नियम एक ऐसा प्रशासकीय व्यवहार के लिए प्रतिमान है जो कर्मचारियों के आचरण और व्यवहार को एक नैतिक परिधि में रखता है जिससे वे अपने पद और प्रस्थिति का दुरुपयोग न कर सकें। आचार–संहिता नियम के द्वारा प्रशासनिक सत्ता के दुरुपयोग को रोका जा सकता है।

सरकारी लोक सेवकों के विभिन्न श्रेणी पृथक–पृथक परन्तु सारतः समान आचरण नियमों द्वारा शासित होते हैं। राजनीति गतिविधियों पर प्रतिबन्ध, प्रेस, दूरदर्शन, रेडियो तथा वाह्य अभिकरणों से संबंध, सरकार की आलोचना,

सार्वजनिक प्रदर्शनों पर प्रतिबन्ध, आय से अधिक संपत्ति, निजी व्यापार और निवेश आदि के मुद्दों पर प्रतिबन्ध इत्यादि अनेक विषय आचरण नियमों की परिधि के अन्तर्गत आते हैं। भारत में कुछ आचरण की नियमावालियाँ निम्नलिखित हैं:

(1) अखिल भारतीय सेवा आचरण नियमावली 1954

(2) केन्द्रीय सेवा आचरण नियमावली 1955

(3) रेलवे सेवा आचरण नियमावली 1956

आचरण नियमावली के अन्तर्गत आने वाले प्रकरण एवं विषय निम्नलिखित है :

(1) राजनीतिक सक्रियता पर प्रतिबन्ध :–

आचरण नियमावली के सिद्धान्त के अनुसार सरकारी कर्मचारी आम नागरिकों की तरह राजनीतिक गतिविधियों में सहभागी नहीं हो सकते हैं। क्योंकि ऐसा माना जाता है कि सरकारी अधिकारिक पद के नाते कर्मचारी के कुछ विशिष्ट अधिकार और उत्तरदायित्व होते हैं। इसी क्रम में उल्लेखनीय है कि सरकारी सेवाओं में राजनीतिक तटस्थता बनाए रखना सार्वजनिक हित में है और उस तटस्थता में जन साधारण का विश्वास प्रशासनिक संरचना का अनिवार्य अंग है।

सरकारी कर्मचारियों की राजनीतिक निष्पक्षता लोकतांत्रिक सरकार की सफलता की एक आवश्यक शर्त मानी गई है। इसका तात्पर्य है कि सरकारी कर्मचारियों को राजनीतिक गतिविधियों में सहभागिता नहीं करनी चाहिए। अनेक देशों में सरकारी सेवाओं की राजनीतिक निष्पक्षता निश्चित करने के लिए राष्ट्र राज्य के राजनीतिक जीवन में सरकारी कर्मचारियों की प्रत्यक्ष भागीदारी प्रतिबन्धित है। सरकारी कर्मचारियों की राजनीतिक स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्धों के विचार को विभिन्न आधारों पर तर्कसंगत ठहराया गया है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में यह प्रथा है कि सरकारी कर्मचारियों को राजनीति में भाग लेने की अनुमति नहीं देनी चाहिए और राजनीति को प्रशासन से पृथक रखा जाना चाहिए। ब्रिटेन में प्रचालित धारणा यह है कि चूंकि सरकारी कर्मचारी सार्वजनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समर्पित हैं फलतः उन्हें तटस्थ रहना चाहिए। भारत में सरकारी कर्मचारियों को मत देने और संघ बनाने का अधिकार है परन्तु उन्हें राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने की मनाही है। सरकारी कर्मचारी किसी भी राजनीतिक दल की सदस्यता नहीं ले सकते तथा उन्हें चंदा भी नहीं दे सकते हैं। वर्ष 1960 में गृह मंत्रालय द्वारा एक परिपत्र जारी किया गया, जिसमें यह कहा गया है कि ''वास्तव में सरकारी कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे किसी भी राजनीतिक गतिविधि में किसी भी रूप में भाग नहीं लेंगे। तथापि इस क्रम में उल्लेखनीय है कि भारत सरकार सभी वर्ग के अपने कार्मिकों/सेविवर्ग को अपने व्यवसाय और कल्याण से संबंधित विषयों में अपने न्यायसंगत हितों की वृद्धि के लिए संघ में संगठित होने का स्वागत करती हैं।'' इन स्थायी नियमों के अतिरिक्त सम्बन्धित विभागों द्वारा समय–समय पर कार्यकारी आदेश, प्रस्ताव तथा निर्देश जारी किये जाते हैं जिनका पालन करना सम्बन्धित विभागों के कर्मचारियों के लिए अनिवार्य होता है।

सरकारी कर्मचारियों के लिए निर्धारित कुछ महत्वपूर्ण आचरण नियम निम्नांकित हैं–

(A) कोई भी सरकारी कर्मचारी किसी भी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं होगा। किसी भी राजनीतिक आन्दोलन या गतिविधि में सहभाग नहीं करेगा। इसी प्रकार कर्मचारी किसी राजनीतिक दल को आर्थिक सहायता के रूप में चंदा नहीं दे सकते हैं। केन्द्रीय सिविल सेवा आचरण नियम 1955 नियमावली के नियम–4 में यह सुनिश्चित किया गया है कि कोई भी सरकारी कर्मचारी किसी विधानसभा के चुनाव के लिए प्रचार–प्रसार नहीं करेगा या हस्तक्षेप नहीं करेगा एवं चुनावों के संबंध में अपने पद का उपयोग नहीं करेगा।

(B) सरकारी कर्मचारी द्वारा राज्यद्रोही प्रचार या देशद्रोही भावनाओं की अभिव्यक्ति उसकी सेवा समाप्ति के लिए पर्याप्त आधार मानी जाती है।

(C) सरकारी कर्मचारियों के संघ बनाने का और हड़ताल करने का प्रश्न परस्पर एक दूसरे से अति निकटता से जुड़े हुए हैं। सरकारी कर्मचारियों के संगठन से सम्बद्ध अन्य सभी विषयों में हड़ताल का प्रश्न सर्वाधिक विवादास्पद है। संयुक्त राज्य अमेरिका में जनमत सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल के पक्ष में किसी भी समय

नहीं है। ब्रिटिश प्रशासकीय परम्परा में सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल के अधिकार के विरुद्ध कोई प्रतिबन्ध नहीं है। भारत में भी सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल करने पर प्रतिबन्ध नहीं है, परन्तु जब जुलाई 1960 में केन्द्रीय सरकार के कर्मचारी सामान्य हड़ताल पर गए तो इसे अनिवार्य सेवा संधारण अध्यादेश 1960 के प्रावधानों के अन्तर्गत गैर–विधिक घोषित कर दिया गया था। यह अध्यादेश किसी भी अनिवार्य सेवा यथा डाक–तार, संचार माध्यम तथा परिवहन–साधन आदि में हड़तालों पर रोक लगाने के लिए संघ सरकार को अधिकार प्रदान करता है।

(2) प्रेस, रेडियो तथा बाहरी एजंसियों के साथ संबंध पर प्रतिबन्ध तथा सरकार की आलोचना का मामला –

सरकारी कर्मचारियों पर कुछ विशिष्ट प्रतिबन्ध की व्यवस्था की गयी है। सरकारी गोपनीयता अधिनियम 1983 की धाराएँ किसी भी सरकारी प्रलेख एवं अधिकार पत्र या कोई सूचना किसी ऐसे व्यक्ति को देने पर पर प्रतिबन्ध लगाती हैं। इसी प्रकार केन्द्रीय सिविल सेवा आचरण नियमावली के नियम–8 में प्रावधान है कि सेवा में अनुशासन और सत्यनिष्ठा के हित में कर्मचारी सरकार द्वारा निर्मित सार्वजनिक नीति कि सार्वजनिक रूप से आलोचना नहीं कर सकते हैं। सरकारी कर्मचारी का दायित्व है कि वह राज्य एवं सरकार के विरुद्ध विद्रोह के किसी भी रूप का समर्थन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ना करें। भारत सरकार के सरकारी अधिकारियों द्वारा रेडियो प्रसारण करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है, परन्तु यह प्रावधान किया गया है कि भारतीय राज्य रेडियो प्रसारण सेवा राजनीतिक प्रचार के प्रयोजन हेतु प्रयुक्त नहीं की जाएगी।

(3) सार्वजनिक प्रदर्शन उपहार पर प्रतिबन्ध –

सरकारी कर्मचारी किसी राजनीतिक आन्दोलन अथवा गतिविधि के सहायतार्थ चंदा नहीं दे सकते हैं। इस प्रकार का प्रतिबन्ध केन्द्रीय सेवा आचरण नियमावली 1964 के नियम–5 के द्वारा लगाया गया है। विमर्श के इसी क्रम में अखिल भारतीय सेवा के आचरण नियमों में कहा गया है कि सरकारी सेवा का कोई भी सदस्य सरकार के पूर्व स्वीकृति के बिना किसी भी व्यक्ति से नगण्य मूल्य से अधिक का कोई उपहार न तो स्वयं लेगा और न ही पत्नी अथवा परिवार के किसी भी सदस्य को स्वीकार करने की अनुमति देगा।

(4) सम्पत्ति, निजी व्यवसाय तथा निवेश आदि के विषय में प्रतिबन्ध –

अखिल भारतीय सेवाओं के आचरण नियमों में कहा गया है :

(1) सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई भी सरकारी कर्मचारी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से किसी व्यापार में खुद को सम्बद्ध नहीं करेगा।

(2) सरकारी सेवा का कोई भी सदस्य किसी निवेश का सट्टा नहीं करेगा।

(3) सेवा का कोई भी सदस्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना अपने पुत्र, पुत्री या अन्य आश्रित को किसी ऐसे निजी फर्म में नौकरी स्वीकार करने की अनुमति नहीं देगा जिसके साथ उसका सरकारी लेन–देन हो।

(4) सरकारी गोपनीयता अधिनियम 1923 की धाराओं में कोई भी सरकारी प्रपत्र या सूचना किसी ऐसे व्यक्ति को देने की मनाही है जिसे देने के लिए वे अधिकृत नहीं है।

(5) सेवा में अनुशासन और सत्यनिष्ठा के स्थापना में सरकारी कर्मचारी को सरकार द्वारा निर्मित या पारित किसी भी नीति की सार्वजनिक आलोचना करने की अनुमति नहीं है।

(6) राष्ट्र की सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु केन्द्रीय सिविल सेवा आचरण नियमावली के नियम–5 एवं खण्ड–2 में यह अपेक्षा की गयी है कि सरकारी सेवक अपने परिवार के किसी भी सदस्य को विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में विद्रोह की भावना से प्रेरित किसी भी गतिविधि में भाग लेने अथवा किसी भी प्रकार से सहयोग करने से रोकने का प्रयास करेगा साथ ही प्रत्येक परिस्थिति में देश को यह विश्वास दिलाना चाहिए की चाहे कोई भी राजनीतिक दल सत्ता में हो, सरकारी कर्मचारी निष्ठा और प्रतिबद्धता के साथ तत्कालीन सरकार की सेवा करेगा।

7.6 अनुशासनिक कार्यवाही की अवधारणा

एक सामान्य तथ्य है कि स्टाफ के प्रत्येक सदस्य निर्दोष भाव से समान उत्साह के साथ आचरण का परिचय देंगे, फलतः प्रत्येक संगठन में अनुशासनात्मक कार्यवाही की व्यवस्था की जाती है। इस सन्दर्भ में स्टाल महोदय की मान्यता है कि ''कोई भी संगठन इतना पूर्ण नहीं है, कोई भी कार्यपालिका इतनी शुद्ध नहीं है, कोई भी कार्मिक व्यवस्था इतनी सभ्रान्त नहीं है कि इसमें कर्मचारियों के गलत व्यवहार या अकार्यकुशलता के लिए दण्ड–व्यवस्था को बिल्कुल समाप्त कर दिया जाये।''

अनुशासनिक कार्यवाही कर्मचारी के कार्य निष्पादन से संबंधित कदाचार को ठीक करने के लिए उठाए गए प्रशासकीय कदमों से सम्बन्धित है। डॉ0 स्प्रिंगल महोदय ने अनुशासन की समीचीन परिभाषा की है। उनके अनुसार ''अनुशासन वह शक्ति है जो व्यक्ति अथवा समूह को उन नियमों, विनियमों और प्रक्रियाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करती है, जो किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक समझी जाती है। यह शक्ति या शक्ति का डर है जो व्यक्ति अथवा समूह को ऐसे काम करने से रोकती है और जो समूह के उद्देश्यों के लिए विनाशकारी मानी जाती है। यह समूह के विनियमों के उल्लंघन के लिए दंड का प्रवर्तन अथवा नियंत्रण का अनुष्ठान भी है।'' अनुशासनिक कार्यवाही का प्रसंग दीवानी अथवा फौजदारी प्रक्रिया से अलग है। क्योंकि अनुशासनिक कार्यवाही प्रशासन के नियमों का उल्लंघन करते हुए कार्यालय में की गयी त्रुटियों से संबंधित है। जबकि दीवानी फौजदारी का प्रसंग विधि के उल्लंघन से संबंधित है जिनका समाधान दीवानी या फौजदारी न्यायालयों द्वारा किया जाता है।

आचरण नियमों के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों का समावेश होता है–

(1) विशिष्ट अधिकारी के प्रति उचित व्यवहार बनाए रखना।

(2) राज्य के प्रति निष्ठा का भाव प्रकट करना।

(3) कर्मचारियों की निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक गतिविधियों का नियमन।

(4) कार्यालयी, निजी तथा घरेलू जीवन के सन्दर्भ में नैतिक संहिता प्रभावी रूप से लागू किया जाता है।

(5) सत्यनिष्ठा को सुरक्षित रखने के लिए निवेश, ऋण, व्यापार, चल एवं अचल मूल्यवान संपत्ति को प्राप्त करने या विक्रय, उपहार आदि स्वीकार करने पर प्रतिबन्ध है।

(6) एक से अधिक विवाह पर प्रतिबन्ध है।

7.7 अनुशासनात्मक कार्यवाही के प्रमुख कारण

अनुशासनात्मक कार्यवाही के प्रमुख कारणों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है–

(1) अपराधों के समकक्ष कार्य।

(2) लघु अपराध के समकक्ष आचरण।

(1) अपराधों के समकक्ष कार्य – इसके अन्तर्गत गबन, जालसाजी से धन का दुरुपयोग, छलपूर्ण दावे, अभिलेखों की जालसाजी, सरकारी संपत्ति की चोरी, सरकार को धोखा देना, रिश्वत लेना, भ्रष्टाचार युक्त आचरण करना, आय से अधिक संपत्ति का स्वामित्व एवं सरकारी कर्मचारियों पर लागू अन्य विधियों के विरुद्ध अपराध।

(2) छोटे अपराध के समकक्ष आचरण – इसके अन्तर्गत आदेशों की अवज्ञा, आज्ञा की अवहेलना, अभद्र व्यवहार, आचरण नियमों का उल्लंघन, साजिश एवं अविश्वसनीय होना आदि।

7.8 अनुशासन परिरक्षण के सन्दर्भ में भारत का संविधान

संविधान के अनुच्छेद 309 में यह विदित है की संघ अथवा किसी राज्य के विषय से संबंधित सरकारी नौकरियों तथा पदों पर नियुक्त किए गए व्यक्तियों की भर्ती एवं सेवा शर्तें उपयुक्त विधान मण्डल के अधिनियम द्वारा विनियमित होंगी। साथ ही जब तक उपयुक्त विधान मंडल द्वारा प्रावधान नहीं बनाया जाता तब तक राष्ट्रपति या राज्यपाल जैसा कि प्रसंग हो सरकारी नौकरियों की भर्ती और सेवा शर्तो को विनियमित करने हेतु सक्षम होंगे।

इसी क्रम में अनुच्छेद 310 में कहा गया है कि रक्षा सेवा या संघ की लोकसेवा या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य अथवा संघ शासन के अधीन कोई भी सैनिक अथवा असैनिक पद ग्रहण करने वाला व्यक्ति राष्ट्रपति की कृपा के अधीन ही अपना पद धारण करता है और राज्य सरकार की सेवा का सदस्य अथवा राज्य सरकार के अधीन किसी भी लोकसेवा पद पर नियुक्त व्यक्ति उस राज्य के राज्यपाल की कृपा के अधीन पद धारणा करता है। 42वें संविधान संशोधन द्वारा संशोधित अनुच्छेद 311 में यह प्रावधान है कि किसी भी ऐसे व्यक्ति को जो संघ की असैनिक सेवा अथवा अखिल भारतीय सेवा अथवा राज्य असैनिक सेवा (लोक सेवा) का सदस्य है या संघ या राज्य के अधीन असैनिक पद ग्रहण किए हुए है। उसे उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा पद से नहीं हटाया जाएगा। यथा पूर्वोक्त किसी व्यक्ति को ऐसी जाँच के पश्चात् ही जिसमें उसे अपने विरुद्ध आरोपों की सूचना दे दी गई है और उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया है, पद से हटाया जाएगा या उसके रैंक में नीचे स्थानान्तरित किया जाएगा, अन्यथा नहीं परन्तु अनुच्छेद 311 के उपबन्ध आपराधिक श्रेणी के आचरण एवं राष्ट्रपति व राजपाल की दृष्टि में राष्ट्र की सुरक्षा को संकट में डालने वाले आचरण ऊपर लागू नहीं होते हैं। इस प्रकार अनुच्छेद 311 के अन्तर्गत सुरक्षा मात्र प्राकृतिक न्याय का मूलभूत सिद्धान्त है। संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए न्यायमूर्ति वेंकटचलैया की अध्यक्षता में गठित आयोग (2002) ने कहा था कि अनुच्छेद 311 के तहत प्रदत्त संविधान के सुरक्षात्मक प्रावधानों को पुनः समीक्षा की आवश्यकता है, ताकि सत्यनिष्ठ और सक्षम अधिकारियों को संरक्षण दिया जा सके।

7.9 अनुशासनात्मक कार्यवाही में निहित क्रमिक चरण

अनुशासनिक कार्यवाही की प्रक्रिया के क्रमबद्ध चरण निम्नलिखित है :

(1) जिस कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जानी है उससे स्पष्टीकरण माँगना।

(2) यदि स्पष्टीकरण प्राप्त नहीं होता है अथवा संतोषजनक नहीं है तो आरोप लगाना।

(3) यदि कर्मचारी के सेवा में रहने से उसके विरुद्ध साक्ष्य पर प्रतिकूल प्रभाव संभावित हो तो उस कर्मचारी का निलंबन।

(4) आरोपों पर सुनवाई तथा कर्मचारी को अपने बचाव का अवसर देना।

(5) जाँच–परिणाम तथा प्रतिवेदन।

(6) कर्मचारी को प्रस्तावित दण्ड विरुद्ध अपने बचाव का एक और अवसर देना।

(7) दण्ड आदेश, अथवा दोष मुक्ति तथा

(8) अपील, यदि कोई हो।

जहाँ तक अपील सुनवाई के अधिकार की बात है राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त कर्मचारी को स्वयं राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध अपील करने का अधिकार नहीं है। अखिल भारतीय सेवा का सदस्य राज्य सरकार के आदेश पर राष्ट्रपति को अपील कर सकता है। राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त सदस्य राज्य सरकार द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध राष्ट्रपति के यहाँ अपील कर सकता है। निचली श्रेणी की सेवा के सभी कर्मचारी उस आदेश से संबंधित नियम बनाने वाले प्राधिकारी को अपील कर सकते हैं। अब अपील करने के परिस्थितियों का उल्लेख करना स्वाभाविक प्रतीत होता है, जो इस प्रकार हैंः नियमों के अन्तर्गत उसकी अनुमति हो, उसका स्वरूप दोषपूर्ण न हो तथा उचित माध्यम से प्रेषित की गयी हो, जिस आदेश के विरुद्ध अपील की गई है उस आदेश के संप्रेषण की तिथि से छः माह के अन्दर वह प्रेषित की गई हो। यह नियमों के अन्तर्गत ग्रहणकर्ता प्राधिकारी को संबोधित हो।

7.10 सारांश

अनुशासनिक कार्यवाहियाँ यह पता लगाने के लिए होती हैं कि किसी कर्मचारी ने एक निर्देशित नैतिक संहिता एवं व्यवसायिक आचरण का अतिक्रमण किया है या नहीं ताकि नियोक्ता द्वारा दोषी सिद्ध होने पर उसे नौकरी से बाहर करने या नौकरी से संबंधित लाभों से बाहर करने की शक्तियाँ लगाई जा सकें। सरकारी कर्मचारियों द्वारा किए जाने वाले कदाचार से निपटने के संपूर्ण उपायों के प्रयासों में से अनुशासनिक कार्यवाही का विशेष स्थान है, क्योंकि संपूर्ण प्रक्रिया लोकसेवा व्यवस्था के भीतर रहकर चलती है। एक कुशल अनुशासनिक प्रणाली कार्यकुशलता और व्यवसायिकता में वृद्धि करती है। भारत में सरकारी कर्मचारियों के लिए आचरण संहिता के नियम उतने सशक्त नहीं है जितने वे प्रतीत होते हैं क्योंकि बारम्बार और बहुत सी भूल–चूक होने के कारण उनके प्रभावी करने में शिथिलता की प्रवृत्ति पायी जाती है। तदोपरान्त कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों से बाहर सिद्ध करने का दायित्व अनुशासनिक कार्यवाही प्रस्तावित करने वाले प्राधिकारी पर होता है। इसके अतिरिक्त लोक सेवकों को कार्यवाही रोकने या बचने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं। भारतीय प्रशासन में अंशतः इसी कारण से अक्षमता और भ्रष्टाचार की प्रत्यक्ष समस्याएँ हैं। यह याद रखना आवश्यक है कि प्रशासन राजसत्ता को सामाजिक वैधता प्रदान करता है। जनमानस में हमारे अनेक प्रतिष्ठित सत्ता और प्रशासनिक प्रतिष्ठानों की वैधता में दिखाई दे रही गिरावट भ्रष्टाचार के कारण हो रही है। फलतः प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन का पालन अत्यन्त आवश्यक रूप में होना चाहिए।

7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) कार्मिक प्रशासन में आचरण एवं अनुशासन की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(2) आचरण नियमावली के अन्तर्गत आने वाले विषयों को स्पष्ट कीजिए।

(3) अनुशासनात्मक कार्यवाही के विभिन्न रूपों को स्पष्ट कीजिए।

(4) अनुशासन परिक्षण के सन्दर्भ में भारत में संविधान की शक्तियों का परीक्षण कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) संविधान के किस अनुच्छेद में प्रावधान है कि सरकारी सेवा की भर्ती एवं सेवा शर्तों पर विधान बनाने का अधिकार विधान मण्डल का है ?

(A) अनुच्छेद 309

(B) अनुच्छेद 310

(C) अनुच्छेद 311

(D) अनुच्छेद 312

(2) सिविल सेवकों को संवैधानिक रक्षक की व्यवस्था किस अनुच्छेद से प्राप्त होता है ?

(A) 309

(B) 310

(C) 311

(D) 312

(3) किस आयोग ने अनुच्छेद 311 के तहत प्राप्त सुरक्षात्मक पावधानों की समीक्षा की बात कही ?

(A) न्यायमूर्ति वेंकटचलैया आयोग

(B) द्वितीय वेतन आयोग

(C) पंचम वेतन आयोग

(D) प्रशासनिक सुधार आयोग

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) A **(2)** C **(3)** A

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई–08 प्रशासनिक नैतिकता तथा सरकारी सेवाओं में निष्ठा

इकाई की रूपरेखा–

8.1 उद्देश्य

8.2 परिचय

8.3 निष्ठा का अर्थ

8.4 'शासन में नैतिकता' द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का दृष्टिकोण

8.5 प्रशासनिक नैतिकता का व्यवहार निश्चित करने वाले प्रमुख तत्व

8.6 सरकारी सेवाओं में भ्रष्टाचार

8.7 सरकारी सेवाओं में निष्ठा में ह्रास के कारण

8.8 भ्रष्टाचार रोकने हेतु विधिक ढाँचा

8.9 सरकारी सेवाओं में निष्ठा सुधार हेतु सुझाव

8.10 सारांश

8.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.12 सन्दर्भ सूची

8.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपः

- प्रशासनिक नैतिकता का व्यवहार निर्मित करने वाले मूल्य तत्वों की विवेचना कर सकेंगे।
- प्रशासनिक नैतिकता का सरकारी सेवाओं में क्या महत्व है वर्णन कर सकेंगे।
- द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का प्रशासन में नैतिकता पर क्या दृष्टिकोण है स्पष्ट कर सकेंगे।
- सरकारी सेवाओं में निष्ठा क्षय के कारणों का वर्णन कर सकेंगे।
- सत्यनिष्ठा सुनिश्चित करने तथा भ्रष्टाचार रोकने के वैधानिक संरचना का विवेचन कर सकेंगे, तथा
- सरकारी सेवाओं में निष्ठा सुधार हेतु सुझाव प्रस्तुत कर सकेंगे।

8.2 परिचय

एक अच्छे शासन के छः मापदंड समझे जाते हैं, जो इस प्रकार है– कथन और जवाबदेही, राजनीतिक अस्थिरता और हिंसा की अनुपस्थिति, सरकारी प्रभावशीलता, विनियामक बोझ युक्तियुक्तता, विधिक नियम, रिश्वत की अनुपस्थिति। इसमें से विधिक नियम तथा रिश्वत की अनुपस्थिति प्रशासनिक नैतिकता से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है। प्रशासनिक संगठनों को एक ऐसी जटिल व्यवस्था के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है जिससे सामाजिक–मनोवैज्ञानिक एवं तकनीकी तत्वों का समावेश होता है। इसीलिए इसके प्रबन्ध में तकनीकी कौशल और मानवीय व्यवहार के प्रेरकों की गहन समझ दोनों ही आवश्यक है। नैतिकता के अभाव में और कुटिलतापूर्ण योजना के कारण संगठन की क्षमता में ह्रास आता है। प्रशासनिक नैतिकता जैसे मूल्य प्रतिबद्धता से संगठनों में जीवंतता का संचार होता है। प्रशासनिक नैतिकता और सरकारी सेवा में निष्ठा से पारस्परिकता, सहयोग, आत्मनियंत्रण और पारस्परिक समर्थन का भाव संगठन में आता है। प्रशासनिक नैतिकता और सरकारी सेवा में निष्ठा की कमी भ्रष्टाचार को बढ़ाता है। उच्च स्थानों पर भ्रष्टाचार लोगों के विश्वास को सरकार के प्रति घटा देता है। जीवंत प्रशासनिक व्यवस्था में लोग लोक सेवकों से अपेक्षा की जाती है की वह उच्च नैतिक स्तर को बनाए रखें। सरकारी कर्मचारी

वर्ग को सेवा के आदर्शों से अनुप्राणित होना चाहिए। कर्मचारी वर्ग के मन एवं मस्तिष्क में जनता की सेवा करने का भाव होना चाहिए। गांधी जी के कहे इन शब्दों की महत्ता अत्यन्त उपयोगी है कि ''जो परिवर्तन आप दुनिया में देखना चाहते हैं, वह पहले स्वयं में लाएँ।'' यह आधारभूत सिद्धान्त कर्मचारी वर्ग के स्वभाव में होना चाहिए। अच्छा शासन नागरिकों का मूलभूत अधिकार है। मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता निष्पक्ष एवं न्यायसंगत निर्णय लेने में अत्यन्त उपयोगी है। राजनेताओं, प्रशासकों, प्रबन्धकों एवं अच्छे नागरिकों के मूल्ययुक्त संयोग से कार्य करने की उत्कृष्ट परिस्थितियों का निर्माण होता है। निष्ठावान सरकारी कर्मचारी वर्ग लोकतांत्रिक मूल्यों के परिरक्षण में सहायक होते हैं। इसके फलस्वरूप सुशासन की प्रवृत्ति एवं सरकार के प्रति सामाजिक वैधता बनी रहती है

8.3 निष्ठा का अर्थ

निष्ठा नैतिक सिद्धान्तों का समुच्चय है जिसमें सद्‌गुण, ईमानदारी, सच्चाई और निष्कपटा के तत्व मौजूद रहते हैं। वस्तुतः निष्ठा कल्याणकारी राज्य का सर्वाधिक अनिवार्य गुण है। निष्ठा के अभाव में प्रशासनिक ढाँचा कमजोर हो जाता है और प्रशासन में जनता के विश्वास को नष्ट कर देता है। फलतः प्रशासन में हर प्रकार के भ्रष्टाचार के विरुद्ध निरन्तर युद्ध होना चाहिए। सरकारी कर्मचारियों में निष्ठा अनिवार्य रूप से होनी चाहिए।

8.4 'शासन में नैतिकता' द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का दृष्टिकोण

मोइली प्रशासनिक सुधार आयोग की चौथी रिपोर्ट जनवरी 2007 में आयी। यह शासन में नैतिकता से संबंधित है। नैतिकता मानक नियमों का एक संवर्ग है, जिसे समाज अपने ही ऊपर लागू करता है और जो व्यवहार, विकल्पों और कार्यवाहियों के मार्गदर्शन में सहायता करता है। आयोग इस बात से बड़े दुःख के साथ अवगत हुआ है कि मानक नियम अपने आप में नैतिक व्यवहार को सुनिश्चित नहीं करते अपितु उन्हें सत्यनिष्ठा की स्वस्थ संस्कृति की ठोस जरूरत होती है। मानक नियमों को केवल प्रभावी अभिव्यक्ति से कुछ नहीं होता है, मानक नियमों की स्थापना के लिए आवश्यक है कि अनैतिक कार्यों की समय से जाँच करके दण्ड दिया जाए। आयोग ने यह तथ्य उद्‌घाटित किया है कि भ्रष्टाचार जो नैतिकता की विफलता की एक महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है वह समाज के ऊँचे वर्ग के लोगों से चलकर आम लोगों के दैनिक जीवन में प्रवेश पा लिया है।

आयोग ने शासन में भ्रष्टाचार के तीन कारणों की पहचान की है जो निम्नलिखित हैं–

(1) औपनिवेशिक विरासत अर्थात सत्ता के प्रति समाज में श्रद्धा भाव जिससे प्राधिकारियों के लिए नैतिक आचरण से बच निकालना सरल हो जाता है।

(2) सरकारी कर्मचारियों की समाज में प्रतिष्ठा के कारण सामाजिक नैतिकता का दबाव कम हो जाता है, जिससे भ्रष्टाचार की बढ़ोत्तरी होती है।

(3) राज्य सब्सिडियों और लाभोन्मुखी कार्यक्रमों के कारण लोक सेवकों की भूमिका संरक्षक जैसे हो गयी तथा नागरिकों को सत्ता की दया पर छोड़ दिया गया। जिसने लोक सेवकों के लिए भ्रष्टाचार का अवसर प्रदान किया।

प्रशासन में नैतिक मूल्यों के प्रतिष्ठा के लिए शासन में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक–न्यायिक–प्रशासनिक सुधारों से लेकर ईमानदार लोक सेवकों को संरक्षण देने तक आने को सुझाव दिये गये हैं। आम लोग भ्रष्टाचार को और सहने के लिए तैयार नहीं है और जिसके कारण राजनीतिक वर्ग को भी भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता (जीरो टालरेंस) की नीति को घोषणा करनी पड़ी।

आयोग ने कहा है कि अति केन्द्रीकरण भ्रष्टाचार को बढ़ाने वाला एक कारक है। लोगों से सत्ता का केन्द्र जितना दूर होगा उतना ही अधिक प्राधिकार और जवाबदेही के बीच अन्तर होगा।

आयोग ने संविधान के अनुच्छेद 311 को समाप्त करने का सुझाव दिया है। यह अनुच्छेद नौकरशाही को संरक्षण प्रदान करता है, जिसे भ्रष्टाचार को रोकने में बाधक माना गया है। इसी प्रकार होता समिति और संथानम समिति ने स्वीकार किया है कि प्रशासनिक सेवाओं में ईमानदारी और जवाबदेही के मानकों में गिरावट की बड़ी वजह मौखिक आदेशों पर काम करने और आदेश न जारी करने की पद्धति रही है जिसे रिकॉर्ड में नहीं रखा जाता। यह सारे कारण ऐसे हैं जो प्रशासन में नैतिकता के क्षय के लिए उत्तरदायी है।

8.5 प्रशासनिक नैतिकता का व्यवहार निश्चित करने वाले मूल तत्व

प्रशासनिक नैतिकता का प्रयोग निश्चित करने वाले मूल तत्व निम्नलिखित हैं :

(1) **अपने व्यवसायिक कार्यों में श्रेष्ठ सेवा भाव का संकल्प** — संगठन की उपादेयता उसके राजनीतिक एवं प्रशासनिक नेतृत्व पर निर्भर करती है। ऐसे में सरकारी सेवाओं को ऐसे नैतिक मापदंड स्थापित करने चाहिए जो उनके श्रेष्ठ कार्य निष्पादन में सहायक हों। यदि कोई संगठन या समूह उच्च मानदण्डों को श्रेयस्कर मानता है तो उसमें आने वाले व्यक्ति का व्यवहार अवश्य प्रभावित होता है। सरकारी सेवाओं का भविष्य ऐसे सद्विचार रखने वाले व्यक्तियों पर निर्भर करता है जिनमें पद संबंधी अहंकार नहीं पाया जाता है तथा नैतिक रूप से वे रचनात्मक व्यक्तित्व के स्वामी होते हैं। संगठन के निर्धारित लक्ष्यों के प्रति समर्पण की भावना शीर्ष नेतृत्वकर्ताओं की अपरिहार्य विशिष्टता होनी चाहिए। प्रभावी एवं दक्षतापूर्ण कार्य संचालन जनता के भीतर विश्वासपूर्ण वातावरण निर्मित करता है जिससे प्रशासन को सरकारी सेवाओं को लागू करने में सुगमता होती है। सारतः यह कहना समीचीन होगा कि जब तक संगठन में कार्यरत कर्मचारी संगठन के आदर्शों के प्रति नैतिक रूप से प्रतिबद्ध नहीं होंगे तब तक किसी भी संगठन का विकास नहीं हो सकता है।

(2) **राजनीति में नैतिकता का समावेश**— राजनीति में नैतिक मूल्यों का समावेश अवश्य होना चाहिए। जिससे राजनीतिक अभिजन वर्ग सत्यनिष्ठा प्रदर्शित कर सके और अपने कार्यों से निष्पक्षता एवं न्यायपूर्णता का उदाहरण अपने अधीनस्थों के लिए प्रस्तुत कर सके। लोक प्रशासन में अधिकांश समस्याएँ राजनीतिक भ्रष्टाचार और गैर विधिक हस्तक्षेप से उत्पन्न होती हैं। राजनीतिक एवं प्रशासनिक नेतृत्व के बीच विश्वासनीयता का अन्तराल बढ़ रहा है। वोहरा समिति रिपोर्ट अक्टूबर 1993 में पूर्व भारतीय गृह सचिव एन0एन0 वोहरा द्वारा प्रस्तुत की गई थी। इसमें भारत में राजनीति के अपराधीकरण और अपराधियों, राजनेताओं और नौकरशाहों की बीच सांठगांठ की समस्या का अध्ययन किया गया था। जिससे यह ज्ञात होता है कि राजनीति में नैतिक पतन प्रशासनिक व्यवस्था के निष्पक्षता एवं कार्यकुशलता के ह्रास के लिए किस प्रकार जिम्मेदार है। कोई भी संगठन तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक राजनीतिक नेतृत्व सच्चरित्र न हो। राजनीतिक अभिजन वर्ग एवं प्रशासनिक सेवा से सम्बद्ध कार्मिक वर्ग के नैतिक एवं निष्ठावान मनोवृत्ति से ही लोकतांत्रिक मूल्यों से ओतप्रोत कल्याणकारी प्रशासन को गतिशीलता प्रदान किया जा सकता है। आज का समय नागरिक केन्द्रित प्रशासन का है ऐसे में इसकी आवश्यकता अत्यन्त आवश्यक है। राजनीतिक नेतृत्व और लोक सेवकों को व्यवसायिक नैतिक आचरण के मानदंडों का अनुपालन करना चाहिए। ऐसा करने से न केवल सुशासन की कार्य रूचि को प्रमुखता मिलती है अपितु राष्ट्र की वृद्धि एवं संवृद्धि के लिए स्टील फ्रेम के रूप में सम्मानित अखिल भारतीय सेवा की प्रतिष्ठा पुनः बढ़ाने में भी सहायता मिलती है।

(3) **सरकारी कर्मचारियों एवं नागरिकों के मध्य विश्वासपूर्ण सम्बन्ध** — यदि प्रशासकीय निर्णय उदार तथा निरपेक्ष सिद्धान्तों के आधार पर लिए जाएंगे तो समाज की भागीदारी बढ़ेगी। इससे सिविल सेवाओं में जनता का विश्वास विकसित करने और नए सिरे से उनका सम्मान अर्जित करने में सहायता मिलती है। भारत में जनता और प्रशासकीय संगठन के मध्य अविश्वासपूर्ण वातावरण निर्मित हुआ है, इसके पीछे प्रमुख कारण सत्यनिष्ठा और ईमानदारी की लोक सेवकों में कमी रही है। इसके समाधान के लिए राजनीतिक और प्रशासनिक दोनों स्तरों पर भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिए नवाचार को अपनाना और समुचित तंत्र का विकास और लोक शिकायत निवारण प्रणाली का सुदृढ़ीकरण आवश्यक है। शासकीय संस्थाओं और कार्यालयों में कामकाज के वातावरण में सुधार करना जिससे उसमें नई कार्य संस्कृति और परिवर्तित प्रशासकीय व्यवहार परिलक्षित हो इसमें पारदर्शिता, जवाबदेही, तत्काल कदम उठाने की भावना, सहभागिता और जनहितैषी प्रबन्धन की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। सरकारी कर्मचारियों एवं नागरिकों के बीच विश्वास पूर्ण सम्बन्धों का निर्माण सुशासन के जनोन्मुखी प्रतिमान को स्वीकार करके किया जा सकता है। जनता के हित पर आधारित पारदर्शी एवं उतरदायित्वपूर्ण व्यवस्था जो नैतिकता और सदाचार पर आधारित हो इससे लोक प्रशासन और जनता के मध्य पारस्परिक आस्था एवं मैत्रीपूर्ण भाव निर्मित होगा।

(4) **व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक नैतिकता से युक्त चरित्र निर्माण** — प्रशासनिक नैतिकता और सम्पूर्ण

समाज की सामान्य नैतिकता के मध्य गहरा सम्बन्ध है। इसीलिए कहा जाता है किसी भी शासन की सफलता उसके नागरिकों के प्रभावी सहयोग पर निर्भर करता है।

प्रशासनिक व्यवस्था में कार्यरत कर्मचारियों का चरित्र व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्तर पर अनुशासित होना चाहिए। इस सन्दर्भ में प्रबलता के साथ कहा जाता है कि प्रशासन में सदाचार और ईमानदारी सुनिश्चित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है भ्रष्टाचार विहीनता प्रभावी कानून नियम और सार्वजनिक जीवन के सभी पहलुओं को नियंत्रित करने वाले नियम और उससे भी महत्वपूर्ण है इन नियमों का प्रभावी एवं निष्पक्ष कार्यान्वयन। जनता के संतुष्टि के साथ–साथ सरकार को प्रशासन में दक्षता, कुशलता, प्रभावकारिता और उत्तरदायित्व पर ध्यान देना होगा।

(5) राजनीतिक तटस्थता — प्रशासनिक ढांचे में प्रशासन की कुशलता और सत्यनिष्ठा के लिए राजनीतिक तटस्थता सरकारी सेवा का एक आवश्यक अंग है। इसका अभिप्राय यह है कि सरकारी कर्मचारियों को सरकार को बिना किसी राजनीतिक सोच के निष्पक्ष रुप से स्वतन्त्र और स्पष्ट सलाह देना चाहिए। तटस्थता की अवधारणा के अन्तर्गत निम्न तथ्यों पर जोर दिया गया है–

(1) राजनीतिक प्रभाव के विपरीत प्रशासकों में जनता के विश्वास से युक्त व्यवहार होना चाहिए।

(2) लोक सेवक से राजनीतिक कार्यपालिका यह अपेक्षा करती है कि उनके निर्णयों को निरपेक्ष भाव से लागू किया जाये।

(3) सरकारी सेवा में पदोन्नति और कार्य मूल्यांकन का राजनैतिक प्रभाव से मुक्त वातावरण होना चाहिए।

सरकारी सेवाओं में अनुशासन, निष्ठा और राजनीतिक तटस्थता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार द्वारा बनाए गए सरकारी सेवाओं के आचरण नियमों में सरकारी कर्मचारियों द्वारा पालन की जाने वाली आचार–संहिता दी गयी है। जो निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट होता है–

(1) सेवा का कोई सदस्य किसी भी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं होगा। किसी राजनीतिक आन्दोलन में भाग नहीं लेगा, उसके सहायता में चंदा नहीं देगा।

(2) सेवा के प्रत्येक सदस्य का यह कर्तव्य होगा कि वह परिवार के किसी भी सदस्य को किसी ऐसे आन्दोलन या गतिविधि में, जो प्रत्यक्ष रूप से विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति विद्रोह की भावना से प्रेरित हो या ऐसा प्रतीत हो रहा हो, भाग लेने सहायता में चंदा देने या किसी भी प्रकार से सहायता करने से रोकने का प्रयत्न करेगा।

(3) सरकारी सेवा का कोई भी सदस्य किसी भी लोकसभा, विधानसभा या स्थानीय पंचायत में चुनाव के लिए प्रचार नहीं करेगा या चुनाव के सम्बन्ध अपने प्रभाव का प्रयोग नहीं करेगा।

(4) सरकारी सेवा का सदस्य ऐसे चुनाव में मत देने के योग्य हो तो वह अपने मताधिकार का प्रयोग कर सकता है और यदि वह मत देता है तो वह इस संबंध कोई संकेत नहीं देगा।

(5) केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार की सार्वजनिक नीतियों की आलोचना नहीं कर सकता है, जिससे संघ सरकार एवं राज्य सरकारों के मध्य विवाद उत्पन्न हो जाए। साथ ही ऐसी कोई आलोचना नहीं करेगा जिससे भारत सरकार के वैदेशिक सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ता हो।

राजनीतिज्ञ जनकल्याण के लिए विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए नीतियाँ निर्मित करते समय सिविल सेवा अधिकारियों से परामर्श करते हैं। ऐसे में लोक सेवकों को चाहिए कि मंत्रियों को परामर्श देते समय और वरिष्ठ लोक सेवक के रूप में कार्य करते हुए उन सभी नीति विकल्पों का विश्लेषण करें जो विचारणीय मुद्दे के सन्दर्भ में उपयुक्त हो सकते हैं। इस तथ्य की भी जाँच करें कि सरकार जो नीति लागू करना चाहती है, क्या वह राजनीतिक विवशता है और मात्र अल्पावधि लाभ के लिए है और दीर्घावधि राष्ट्रीय हित के लिए नहीं है। यदि ऐसा हो तो अपने विचार युक्तिसंगत और स्पष्ट रूप से रखें। यदि किसी नीति विकल्प को सर्वाधिक उपयुक्त और नीति के उद्देश्यों को पूरा करने वाला क्यों समझते हैं, इसके लिए समुचित कारणों के साथ स्पष्ट रूप से सुझाव प्रस्तुत करना चाहिए। इसी क्रम में उल्लेखनीय है कि सार्वजनिक विचार–विमर्श के दौरान सरकारी नीति की आलोचना लोक

सेवकों द्वारा नहीं की जानी चाहिए। सरकारी कर्मचारियों लोक सेवकों को यह स्मरण करना उपयोगी सिद्ध होगा कि अखिल भारतीय सेवाएँ संविधान (अनुच्छेद 312) की रचनाएँ हैं। सेवाओं को राजनीतिक कार्यकारी के नेतृत्व में सरकार द्वारा निर्धारित नीतियों का अनुपालन करना होता है, लेकिन नैतिकता का मानदंड यह भी है कि अधिकारों का प्रयोग करते समय उन्हें विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत कुछ विधिक दायित्वों का निर्वाह भी करना होता है।

8.6 सरकारी सेवाओं में भ्रष्टाचार

निष्ठा के सामान्य मानदंडों से हटना विभिन्न रूपों में होता है जैसे भ्रष्टाचार का संरक्षण तथा अनुचित प्रभाव को प्रयोग में लाना। रिश्वत लेना, भाई–भतीजावाद, सत्ता का दुरुपयोग, कालाबाजारी तथा सरकारी धन का अपव्यय करना निष्ठा के अभाव को दर्शाता है। भ्रष्टाचार को सामान्य शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं कि भ्रष्टाचार अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए अपने पद या अधिकार एवं साधनों का सचेतन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दुरुपयोग है, चाहे आर्थिक लाभ के लिए हो या शक्ति, प्रतिष्ठा या प्रभाव में वृद्धि के लिए हो।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 में धारा 7 से 15 में रिश्वत सम्बन्धी अपराधों और अन्य अपराधों तथा जुर्मानों को सूचीबद्ध किया गया है जो निम्न प्रकार के हैं–

- सचेतन स्वीकृत अवैध पारितोषण।
- किसी पदेन कृत्य को करने या ना करने के लिए इनाम के रूप में असंवैधानिक पारितोषण को प्रतिगृहीत करना।
- किसी व्यक्ति के प्रति पक्षपातपूर्ण या घृणा का व्यवहार करना।
- बिना प्रतिफल अथवा अपर्याप्त प्रतिफल के मूल्यवान संपत्ति की प्राप्ति।
- पारितोषण प्राप्ति के लिए आपराधिक कदाचार।
- गबन।
- किसी व्यक्ति से बिना किसी जनहित के बदले में किसी प्रकार की वित्तीय संसाधन की प्राप्ति।
- आय से ज्ञात स्रोत से संबंधित संपत्तियों का गलत उपयोग।

विधि के शासन तथा व्यवसायिक सेवा के विकास के फलस्वरूप लोक सेवाओं की सत्यनिष्ठा के विषय में जनता के दृष्टिकोण में एक परिवर्तन आया है। आज का नागरिक सरकारी कर्मचारियों से यह अपेक्षा रखता है कि ईमानदार, परिश्रमी, सक्षम, संवेदनशील, विनम्र तथा उचित व्यवहार करने वाले हों। मध्य प्रदेश प्रशासनिक सुधार आयोग ने इन सब गुणों को ''प्रशासन में सत्यनिष्ठा तथा सामर्थ्य की संज्ञा दी है।

8.7 सरकारी सेवाओं के निष्ठा में ह्रास के कारण

स्वतनत्रता पश्चात् विगत 76 वर्षों में विभिन्न तत्व उत्पन्न हुए जिनसे भ्रष्टाचार फला–फूला है, लोगों की निष्ठा में ह्रास हुआ है तथा सम्पूर्ण प्रशासन में भ्रष्टाचार व्याप्त है। भ्रष्टाचार के विभिन्न कारण हैं। इन कारणों की विवेचना निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है :

(1) **ऐतिहासिक कारण** – भारतीय प्रशासन प्रणाली पर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का प्रभाव पड़ा है, जो भ्रष्टाचार का मूल कारण है। ब्रिटिश प्रशासन देश के विकास का समर्थक नहीं था। सभी वरिष्ठ और महत्वपूर्ण पदों पर अंग्रेज नियुक्त होते थे। इनका उद्देश्य ब्रिटिश सम्राज्य को बनाए रखना था इनके लिए यह भ्रष्टाचार पूर्ण व्यवहार करते थे।

(2) **विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में मूल्यों का संघर्ष** – समकालीन समाज में नगरीकरण और औद्योगिकरण पर निरन्तर बल दिया गया। इस परिवेश में मौलिक सम्पत्ति स्थिति और आर्थिक शक्ति ही समाज में व्यक्ति के प्रतिष्ठा एवं महत्व निर्धारित कर रहे हैं। परिणामस्वरूप सरकारी कर्मचारी समाज में अपने हैसियत

को बढ़ाने के लिए भ्रष्टाचार करते हैं। बाजार आधारित अर्थव्यवस्था में इसके लिए अवसर में बढ़ोत्तरी हुई।

(3) **शासन की वर्तमान सरचना** – शासन द्वारा नवीन दायित्वों का निर्वहन किया जा रहा है, इसने प्रशासन की प्रक्रिया को अत्यधिक जटिल बना दिया है। कुछ सरकारी विभागों, विशेषतः कस्टम, केन्द्रीय आबकारी, आयात–निर्यात, रेलवे आदि की कार्य पद्धति जटिल, बोझिल एवं विस्तृत है। इसके कारण विभागों में बेईमानी के तरीके चालू हो गए। आज औद्योगिक एवं व्यापारी वर्ग भ्रष्टाचार के रास्ते पर चलकर अपने फाइल को तेजी से आगे बढ़ाने के लिए प्रयास करते हैं। सरकारी ठेके के कारण भ्रष्टाचार व्यापक स्वरूप अर्जित कर चुका है।

(4) **लोक सेवाओं को प्राप्त संरक्षण**– संविधान के अनुच्छेद 311 में प्रावधान है की केन्द्र और राज्य के अधीन सेवारत किसी सिविल सेवक को उसके पद से पदच्युत करने का अधिकार केवल उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी को है। यह भी प्रावधान है कि आरोपों की जाँच किए बिना उसको पद से नहीं हटाया जाएगा या उसकी वरीयता श्रेणी में परिवर्तन नहीं किया जा सकेगा। साथ ही यह भी प्रावधान है कि उसे उन आरोपों की जानकारी देना और उसके पक्ष को सुनने का अवसर दिया जाना जरूरी है। इस सन्दर्भ में मोइली प्रशासनिक सुधार आयोग का तर्क है भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए संविधान के इस प्रावधान को निरस्त करना आवश्यक है।

(5) **राजनीतिक संरक्षण**– स्वतन्त्रता के पश्चात् कुछ दशकों के बाद राजनीतिक व्यवस्था में पतन प्रवृत्ति बढ़ी है, अब राजनेताओं को किसी न किसी तरह चुनाव में सफलता चाहिए। मूल्यों की राजनीति के प्रति प्रतिबद्धता जो पहले थी अब उसमें गिरावट आयी है। राजनेता और नौकरशाही वर्ग के बीच एक प्रकार का विशेष सम्बन्ध विकसित हुआ है जिसमें ये एक–दूसरे के हित के लिए कार्य करते हैं। जिससे जनभावनाओं के विपरीत यह प्रवृत्ति भ्रष्टाचार को बढ़ाने में उत्प्रेरक का कार्य करती हैं। जिससे भ्रष्टाचार को राजनीतिक संरक्षण प्राप्त हुआ है।

(6) **नैतिक मूल्य में क्षय**– भारतीय समाज में नैतिकता का उच्च स्थान रहा है। वर्तमान भारत में नैतिकता या ईमानदारी की बातें करने वाला उपहास का पात्र बन जाता है। अब प्रत्येक लोकसेवक अपने पद, वातावरण तथा परिस्थितियों के अनुसार यथासम्भव भ्रष्टाचार करते हैं। लोक सेवकों को नैतिक मूल्यों की जगह भौतिक सम्पन्नता अधिक आकर्षित करती है। जिससे वह भ्रष्टाचार की ओर उन्मुख होते हैं।

8.8 भ्रष्टाचार रोकने हेतु विधिक ढाँचा

सरकारी कर्मचारियों की निष्ठा एवं ईमानदारी के लिए सर्वप्रथम 1947 में भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम पारित किया गया था। भ्रष्टाचार समस्या के विश्लेषण एवं समाधान हेतु बनी संथानम् कमेटी (1962–64) की अनुशंसा पर केन्द्र सरकार द्वारा दिनांक 11 फरवरी, 1964 को जारी प्रस्ताव के माध्यम से केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना की गयी। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय जाँच ब्यूरो तथा लोकपाल और लोकायुक्त की संस्थाएँ भी भ्रष्टाचार रोकने के लिए है।

(1) सरकारी कर्मचारियों की आचरण नियमावली–

सरकारी कर्मचारियों के विभिन्न वर्ग अलग–अलग परन्तु सारतः समान आचरण नियमों द्वारा शासित है–

(A) अखिल भारतीय सेवा आचरण नियमावली 1954

(B) केन्द्रीय सिविल सेवा आचरण नियमावली, 1955

(C) रेलवे सेवा आचरण नियमावली, 1956

सरकार ने सरकारी कर्मचारियों से सम्बन्धित विशिष्ट परिस्थितियों में कार्यवाही हेतु नियम बनाए हैं–

(i) राजपत्रित अधिकारियों द्वारा ऋण देने या लेने के सम्बन्ध में 1860 में तथा अराजपत्रित कर्मचारियों द्वारा ऋण देने या लेने के सम्बन्ध में 1869 में।

(ii) उपहार स्वीकार करने के सम्बन्ध में 1976 में।

(iii) घर तथा अन्य मूल्यवान सम्पत्ति खरीदने और विक्री के सम्बन्ध में 1881 में।

(iv) अचल सम्पत्ति के अतिरिक्त अन्य निवेश करने तथा सट्टा करने के सम्बन्ध में 1885 में।

(v) कंपनियाँ बनाने या उसका प्रबन्ध करने, निजी व्यापार और नौकरी में सम्बद्ध के बारे में 1885 में।

(vi) सरकारी कर्मचारियों द्वारा चन्दा एकत्रित करने के सम्बन्ध में 1885 में।

(vii) आदतन ऋणग्रस्त होने के सम्बन्ध में 1920 में।

(viii) सेवानिवृत्ति के पश्चात् व्यापारिक नौकरी स्वीकार करने के सम्बन्ध में 1920 में।

इन नियमों के होने के बाद भी भ्रष्ट होने का प्रलोभन इतना सशक्त है कि उसे रोकना कठिन है।

(2) संथानम समिति – भ्रष्टाचार निवारक उपायों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए बनाने के लिए व्यवहारिक साधनों पर सुझाव देने के लिए जून 1962 में संथानम समिति का गठन किया गया जिसने मार्च 1964 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कीं इस समिति की कुछ महत्वपूर्ण अनुशंसाएँ ये थी कि संविधान के अनुच्छेद 311 को इस प्रकार संशोधित किया जाए। जिससे भ्रष्टाचार सम्बन्धी न्यायिक प्रक्रिया सरल और शीघ्रता से हो सके। साथ ही अनुशंसा के क्रम में केन्द्रीय और राज्य स्तरों पर भ्रष्टाचार का सामना करने के लिए स्वशासी अधिकारों सहित क्रमशः केन्द्रीय तथा राज्य सतर्कता आयोग होने चाहिए।

(3) केन्द्रीय सतर्कता आयोग : सी0बी0सी0 – भ्रष्टाचार निवारण समिति जो 'संथानम समिति' के नाम से लोकप्रिय है, द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसरण में भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग का गठन फरवरी 1964 में पारित संकल्प द्वारा किया गया। विनीत नारायण बनाम भारतीय संघवाद में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के फलस्वरूप इसे केन्द्रीय सतर्कता आयोग अधिनियम, 2003 द्वारा 'सांविधिक दर्जा' दिया गया। केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सी0बी0सी0) संघ सरकार को प्रशासन में सत्यनिष्ठा बनाए रखने से संबंधित सभी मामलों पर परामर्श देती है। यह केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के काम–काज की और संघ सरकार के विधि मंत्रालयों और न्याय संगठनों के सतर्कता प्रशासन पर निगरानी रखता है।

(4) केन्द्रीय जाँच ब्यूरो– केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (सी0बी0आई0) संघ सरकार की भ्रष्टाचार निवारण मामलों की मुख्य जाँच एजेंसी है। यह भ्रष्टाचार से संबंधित कुछ विशिष्ट अपराधों अथवा अपराध के वर्गों और अन्य प्रकार के अनाचारों की जिसमें लोकसेवा लिप्त हों, जाँच करने के लिए अपनी शक्तियों को दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम, 1946 से प्राप्त करती है। विशेष पुलिस स्थापना की, जो केन्द्रीय जाँच ब्यूरों के एक खण्ड का गठन करता है, तीन यूनिटें हैं– (1) भ्रष्टाचार निवारण खण्ड (2) आर्थिक अपराध शाखा (3) विशेष अपराध खण्ड।

केन्द्रीय जाँच ब्यूरो के निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं :

(i) यह उच्च स्तरीय कर्मचारियों के विरुद्ध तथा जटिल प्रकरणों में जाँच कर सकता है।

(ii) यह साधन सम्पन्न है और विभिन्न स्रोतों से ऐसी सामग्री प्राप्त कर सकता है जो सामान्य मशीनरी को उपलब्ध नहीं होती है।

(5) लोकपाल एवं लोकायुक्त संस्थाएँ– प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने जनता की शिकायतों को दूर करने के लिए ब्रिटेन और न्यूजीलैण्ड के संसदीय आयुक्त की तरह लोकपाल तथा लोकायुक्त संस्थाएँ स्थापित करने की अनुशंसा 1966 में केन्द्रीय सरकार से की थी।

(A) लोकपाल–

लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम 2013 ने लोग सेवकों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच के लिए देश में लोकपाल और प्रदेशों में लोकायुक्त की नियुक्ति की व्यवस्था सुनिश्चित किया है।

लोकपाल के पास केन्द्र सरकार के लोक सेवकों के विरुद्ध आरोपों और भ्रष्टाचार से संबंधित मामलों का जाँच करने का अधिकार है। लोकपाल सभी सार्वजनिक अधिकारियों की निगरानी करता है और यदि वह कानून के अनुसार कार्य नहीं करते हैं तो उनके विरुद्ध उचित विधिक कार्यवाही कर सकता हैं।

- यह स्वतः संज्ञान लेकर कार्यवाही कर सकता है अथवा किसी निजी व्यक्ति की शिकायत पर प्रतिक्रिया दे सकता है। यदि किसी जाँच अभिकरण द्वारा जाँच शुरू करने से पहले किसी लोक सेवक प्राधिकारी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया कोई मामला है, तो लोकपाल उस अधिकारी को बुला सकता है या पूछताछ कर सकता है।

- यह अपने निष्कर्षों का उपयोग करने का सुझाव दे सकता है। ऐसे मामलों में जहाँ अपील वर्तमान में लागू किसी भिन्न कानून से होती है। लोकपाल अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य करेगा।

- किसी सार्वजनिक अधिकारी या किसी अन्य अधिकारी द्वारा सद्भावना से किए गए किसी भी कार्य की रक्षा करेगा।

- जिन लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया गया है वे भ्रष्टाचार के विरुद्ध बोल सकें, इसके लिए उन्हें पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करेगा।

- सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध पद का दुरुपयोग, भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच करना।

- लोकपाल सी0बी0आई0 समेत किसी भी छानबीन एजेंसी को कोई मामला जाँच के लिए भेज सकता है और उसका पर्यवेक्षण तथा निगरानी कर सकता है।

लोकपाल के अधिकार क्षेत्र को निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है–

(i) लोकपाल कुशासन, अनुचित लाभ पहुँचाने या भ्रष्टाचार से संबंधित मामले जो किसी मंत्री या केन्द्र या राज्य सरकार के सचिव के अनुमोदन से गई प्रशासनिक कार्यवाही के विरोध में पीड़ित व्यक्ति द्वारा लिखित शिकायत किये जाने पर या स्वतः संज्ञान लेते हुए जाँच कर सकता है। साथ ही उल्लेखनीय है कि लोकपाल पीड़ित व्यक्ति को न्यायालय या वैधानिक न्यायाधिकरण से मिले किसी भी निर्णय के सम्बन्ध में किसी प्रकार की जाँच नहीं कर सकता है।

(ii) लोकपाल सरकार से आरोपी लोक सेवकों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करने के लिए कह सकता है या विशेष अदालत में भ्रष्टाचार का मामला दर्ज कर सकता है।

8.9 सरकारी सेवाओं में निष्ठा सुधार हेतु सुझाव

सरकारी सेवाओं में निष्ठा सुधारने के लिए कुछ सुझाव दिए जा सकते हैं ।

(1) नैतिक मूल्यों पर आधारित प्रशिक्षण – लोक सेवकों में नैतिक मूल्यों से संबंधित समझ विकसित करने के लिए विशेष प्रकार प्रशिक्षण का आयोजन सार्ट टर्म कोर्स के रूप में किया जाना चाहिए।

(2) वेतन एवं सेवा शर्तों का आकर्षक बनाना– सरकारी कर्मचारियों को मार्केट के सापेक्ष तर्कसंगत वेतन देकर उनके भीतर निष्ठा के भावना को बढ़ाया जा सकता है सरकारी कर्मचारियों की समस्याओं के अध्ययन के समय वेतन आयोग का गठन किया जाना चाहिए तथा आयोग के तार्किक अनुशंसा को कर्मचारियों के हित में सरकार द्वारा लागू किया जाना चाहिए।

(3) भ्रष्टाचार विरुद्ध स्वस्थ जनमत का निर्माण– सामाजिक जनसमूह के द्वारा यदि भ्रष्टाचार का विरोध होगा तो लोक सेवकों के ऊपर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा भ्रष्टाचार के विरुद्ध यदि व्यापक एवं दृढ़ निश्चयी पहल नागरिक समाज के द्वारा होगी तो भ्रष्टाचार पर नियंत्रण स्थापित होगा।

(4) भ्रष्टाचार के विरुद्ध सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति– भ्रष्टाचार के दो पहलू हैं प्रथम वह संस्थान जो बहुत भ्रष्ट होता है एवं द्वितीय वे व्यक्ति जो बहुत भ्रष्ट होते हैं। यदि सरकार इन दोनों पहलुओं पर दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ प्रहार करें तो भ्रष्टाचार पर नियंत्रण स्थापित होगा।

8.10 सारांश

इस अध्याय में सरकारी सरकारी सेवाओं में प्रशासनिक नैतिकता एवं निष्ठा पर आशय पूर्ण विचार–विमर्श

किया गया। आज का युग लोकतंत्र एवं नागरिक– केंद्रित प्रशासन का है। आज नागरिक सेवा के लिए उत्तरदायित्व लोगों की अच्छे प्रशासन तक पहुँच, पारदर्शिता, नागरिक सहभागिता एवं प्रभावशीलता व दक्षता पर जोर दिया जा रहा है। ऐसे में प्रशासनिक नैतिकता और निष्ठा सरकारी सेवाओं के लिए अत्यन्त आवश्यक है। सरकार आज जनकल्याण एवं सुविधाप्रदानक सरकार के रूप में क्रियाशील है। ऐसे में प्रशासनिक नैतिकता एवं निष्ठा के लिए भ्रष्टाचार को पूर्णतः समाप्त किया जाना चाहिए।

8.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) प्रशासनिक नैतिकतायुक्त व्यवहार को निर्धारित करने वाले तत्वों की विवेचना कीजिए।

(2) शासन में नैतिकता पर द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग के दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।

(3) सरकारी सेवाओं में भ्रष्टाचार के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

(4) सरकारी सेवाओं में निष्ठा के ह्रास के प्रमुख कारणों की विवेचना कीजिए।

(5) भ्रष्टाचार पर नियंत्रण के लिए स्थापित विभिन्न संस्थाओं की भूमिका की समीक्षा कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) संथानम समिति ने अपनी रिपार्ट कब प्रस्तुत की ?

(A) 1962

(B) 1964

(C) 1968

(D) 1969

(2) केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना किस समिति की सुझाव पर किया गया ?

(A) संथानम समिति

(B) मोइली समिति

(C) शेट्टी समिति

(D) देसाई समिति

(3) भष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता (जीरो टालरेंस) को धारणा। किसने प्रतिपादित किया ?

(A) द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग

(B) संथानम समिति

(C) होता समिति

(D) चलैया समिति

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) B **(2)** A **(3)** A

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।

- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

खण्ड–3

नियोक्ता–नियोजक सम्बन्ध

इस खण्ड में कुल 4 इकाइयां हैं जो नियोक्ता–नियोजक सम्बन्ध के विभिन्न संकल्पनाओं से संबंधित हैं।

इकाई 09 कर्मचारी संघ : इस इकाई के अन्तर्गत इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है कि कर्मचारी संघ कर्मचारियों के अधिकारों की रक्षा करते हैं और साथ ही उन्हें उचित कार्य स्थितियां, वेतन, पदोन्नति और अन्य लाभ सुनिश्चित करते हैं। इस प्रकार कर्मचारी संघ की आवश्यकता, कर्मचारी संघों के प्रमुख कार्य एवं हड़ताल करने के सन्दर्भ अधिकारजन्य परिस्थितियों का विवेचन सम्मिलित है।

इकाई 10 संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी : इस इकाई के अन्तर्गत इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है कि संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी सरकार एवं कर्मचारियों के मध्य संवाद और परामर्श का एक महत्वपूर्ण तन्त्र है। इस इकाई के विषय वस्तु के तहत संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी के उद्भव व विकास तथा अनिवार्य पंच निर्णय के महत्व को स्पष्ट किया गया है।

इकाई 11 सार्वजनिक सेवकों के अधिकार : इस इकाई के अंतर्गत इस सामान्य संकल्पना को स्पष्ट किया गया है कि सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों का उद्देश्य न केवल उनके व्यक्तिगत हितों की रक्षा करना है, अपितु लोक सेवा की दक्षता और पारदर्शिता को बनाए रखना है। विषय वस्तु को स्पष्ट करते हुए सार्वजनिक सेवकों की वैचारिक अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, इनसे संबंधित आचार संहिता एवं इनके सेवा सम्बन्धी अधिकार पर विशद् विवेचन किया गया है।

इकाई 12 अभिप्रेरणा एवं मनोबल : इस इकाई के अंतर्गत इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है कि अभिप्रेरणा एवं मनोबल किसी संगठन में कार्यक्षमता और कर्मचारियों की कार्यप्रणाली को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण तत्व हैं। अभिप्रेरणा और मनोबल के मध्य गहरा संबंध है। जहां अभिप्रेरणा कर्मचारियों को प्रेरित करती है, वहीं मनोबल उनके कार्य में स्थायित्व और संतुष्टि प्रदान करता है। विषयवस्तु को स्पष्ट करते हुए, अभिप्रेरणा से संबंधित सिद्धान्तों को स्पष्ट किया गया एवं साथ ही मनोबल को प्रभावित करने वाले तत्वों की विवेचना की गई है।

इकाई– 09 कर्मचारी संघ

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 परिचय

9.2 कर्मचारी संघ की आवश्यकता

9.3 कर्मचारी संघों के उद्देश्य

9.4 कर्मचारी संघों का विकास

9.5 कर्मचारी संघों के प्रमुख कार्य

9.6 हड़ताल करने के सन्दर्भ में अधिकार एवं स्थिति

9.7 सारांश

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- सामान्य रूप से नागरिक सेवाओं में कर्मचारी संघ के उद्देश्यों की विवेचना कर सकेंगें।
- भारत में कर्मचारी संघ के उद्भव एवं विकास को स्पष्ट कर सकेंगें।
- संघ बनाने के अधिकार से संबंधित पक्ष को स्पष्ट कर सकेंगें।
- कर्मचारी संघों के कार्यों तथा क्रियाकलापों को समझ सकेंगें।

9.1 परिचय

नौकरी करने वाला कर्मचारी तथा नौकरी देने वाला नियोक्ता दोनों ही विपरीत विचारधाराओं के मानने वाले रहे हैं। नियोक्त कर्मचारी से अधिक से अधिक कार्यकुशलता एवं प्रतिबद्धता की अपेक्षा करता है। जबकि कर्मचारी की मांग अच्छे पारिश्रमिक तथा श्रेष्ठ सुविधाओं से जुड़ी होती है। ऐसे में कर्मचारी संघों की स्थापना संभावित जान पड़ता है। इस इकाई में हम कर्मचारी संघों के बारे में अध्ययन करेंगे। कर्मचारी संघों के कार्यों को समझेंगे तथा साथ ही कर्मचारी संघों के उद्भव एवं विकास की विवेचना भी करेंगें।

9.2 कर्मचारी संघ की आवश्यकता

भारत का संविधान नागरिकों को संघ बनाने का अधिकार देता है कर्मचारी भी संगठित होकर अपना संघ बनाते हैं जिससे वे अपनी माँग तथा भावनाएँ संगठित रूप में सरकार के सम्मुख रख सकें।

कर्मचारी संघ की आवश्यकता में यह भाव प्रकट होता है कि संघ के रूप में संगठित होकर वे ज्यादा से ज्यादा सुविधाएँ प्राप्त कर सकते हैं। कर्मचारी संघ अपने कर्मचारियों की भलाई तथा सुधार के लिए आवश्यक साधन एकत्रित करने में सक्रिय रहते हैं। संघ के माध्यम से कर्मचारी अपनी समस्याओं को नियोक्त के समक्ष रख पाते हैं। इसके माध्यम से कर्मचारियों की सुरक्षा तथा सेवा शर्तों में सुधार की मांग उठाई जाती है। कर्मचारी संघ आज हमारी राजनीतिक प्रशासनिक व्यवस्था की सामान्य विशेषता बन गये हैं। इस सन्दर्भ में वाल्टर शार्न ने विचार प्रकट किया है कि ''प्रत्येक स्तर पर लोक सेवक ये अनुभव करते हैं कि उनके भौतिक स्तर की उन्नति के लिए प्रारम्भिक शक्ति के रूप में संगठित कार्मिक संघ होने चाहिए।'' कर्मचारी संघ सामूहिकता की भावना से संगठित होकर अपने

पक्ष में समस्याओं का समाधान चाहते हैं।

9.3 कर्मचारी संघों के उद्देश्य

कर्मचारी संघ सदैव से अपने आप को प्रशासनिक व्यवस्था का अंग मानते हैं। यह प्रशासनिक प्रणाली में अपने सक्रिय सहभागिता का अवसर खोजते हैं। ये सरकार और कर्मचारियों के मध्य संवाद स्थापित करने में सहायक होते हैं। संक्षेप में कर्मचारी संगठनों के उद्देश्य निम्नलिखित होते हैं–

(1) सरकार पर वेतन तथा सेवा स्थिति तथा शर्तों को सुधारने के लिए दबाव डालना।

(2) कर्मचारियों को विचारों तथा अनुभव के विनियम के लिए मंच की स्थापना करना।

(3) सदस्यों के बीच मिलकर काम करने की भावना तथा सामूहिक चेतना के विकास को शक्तिशाली बनाना।

(4) कर्मचारियों में साहस की भावना का संचार करना।

(5) सदस्यों का मान सम्मान बढ़ाना।

(6) महत्वपूर्ण समस्याओं की गवेषणा करना तथा नित्य नई सूचना का प्रसार करना।

(7) सेवाओं में सुधार के लिए अधिकारियों को सुझाव देना और

(8) सदाचार की आचार संहिता निर्धारित करना ताकि सदस्य अपने कार्य तथा व्यवहार में इनका अनुकरण कर सकें।

9.4 कर्मचारी संघों का विकास

स्वतन्त्रता मिलने पश्चात् नागरिक सेवा के कर्मचारियों में संस्था बनाने के काम में गौरव का भाव जगने लगा। क्रमशः सभी वर्गों के नागरिक सेवक अपने आपको कर्मचारी संघों के रूप में संगठित करने लगे भारत सरकार ने भी इसके महत्व को समझा और इसके लिए संविधान में एक धारा की व्यवस्था की गई फलतः 26 जनवरी 1950 को लागू किए गए भारतीय संविधान में ''संस्था तथा संघ बनाने के अधिकार का प्रावधान किया गया बशर्ते कि वह सार्वजनिक व्यवस्था अथवा नैतिकता के मार्ग में अवरोधक न हो।'' नागरिकों को प्राप्त मौलिक अधिकार सिविल सेवकों कर्मचारियों को भी मिला हुआ है। इस प्रकार भारत के कर्मचारी संघों के विकास में यह अनुच्छेद एक मील का एक पत्थर सिद्ध हुआ। कर्मचारियों को अपने संघ स्थापित करने की आज्ञा दे दी गई है। किन्तु उनको किसी राजनीतिक दल में सदस्य बनने अथवा अपना राजनीतिक दल बनाने की आज्ञा नहीं हैं।

9.5 कर्मचारी संघ के प्रमुख कार्य

कर्मचारी संघ चाहे व्यवसायिक प्रकृति का हो या श्रमिक यूनियन हो सभी का उद्देश्य कर्मचारी हितों का परीक्षण एवं संवर्धन करना है। संक्षेप में कर्मचारियों संघों के निम्नांकित कार्य होते हैं–

(1) कर्मचारी संघ जिन आधारभूत सिद्धान्तों पर संगठित हुए हैं उन लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहते हैं।

(2) कर्मचारियों के वेतन, भत्तों और अन्य सुविधाओं को दिलवाना चाहते हैं।

(3) नियोक्ता को अपनी समस्याओं से अवगत कराना चाहते हैं।

(4) कर्मचारियों के लिए ऐसी परिस्थितियों की मांग करते हैं जिससे उनके मानसिक आर्थिक एवं सामाजिक विकास को सुनिश्चित किया जा सके।

(5) कार्य की दशा तथा सेवा–शर्तों में सुधार करवाना उनका लक्ष्य है।

(6) वेतन आयोग के समक्ष कर्मचारियों के हितों के पक्ष में अपना तर्क प्रस्तुत करते हैं।

(7) कर्मचारी भी नागरिक समाज का हिस्सा है इससे संबंधित विभिन्न गतिविधियों का संचालन संघों द्वारा किया जाता है।

(8) कार्मिक सबसे पहले एक मनुष्य है इसीलिए उसे भी मानसिक सहयोग की आवश्यकता पड़ती है कर्मचारी संघ इस दिशा में मनोबल बढ़ाने का कार्य करते हैं।

9.6 हड़ताल करने के सन्दभ में अधिकार एवं स्थिति

व्यवसायिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों के लिए कर्मचारी संघ स्थापित किए जा सकते हैं। लेकिन सरकार मात्र उन संस्थाओं से संबंध रखती है जो उचित रूप से उनके द्वारा मान्यता प्राप्त कर चुकी हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकारी कर्मचारियों की राजनैतिक गतिविधियाँ सामान्य तौर पर प्रतिबंधित है। द हेच एक्ट 1939, राजनैतिक संघर्षों, आंदोलनों अथवा निर्वाचन में प्रभाव डालने तथा हस्तक्षेप करने के उद्देश्य से प्रभावित करने से रोकता है। भारत में 1960 की सामान्य हड़ताल से अनुभव प्राप्त करने के पश्चात भारत सरकार ने रक्षा मंत्रालय, डाक व तार तथा रेलवे जैसे कुछ सेवाओं में हड़ताल पर प्रतिबंध लगा दिया था। भारत में सरकारी कर्मचारियों द्वारा हड़ताल कानूनी तौर से प्रतिबंधित नहीं है लेकिन इसे अनुशासन का उल्लंघन माना गया है। केंद्रीय सिविल सेवाएं नियम 1955 के आधार पर कर्मचारी की सेवा की शर्तों के संबंध में किसी बात के लिए हड़ताल के किसी रूप को अपनाना या प्रदर्शन में सहभाग करना वर्जित किया गया है। हड़ताल के सन्दर्भ में द्वितीय वेतन आयोग ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि लोक सेवकों द्वारा हड़ताल का आश्रय लेना या उसकी धमकी देना सर्वथा गलत है। केन्द्रीय शासन द्वारा गठित प्रशासकीय सुधार आयोग (1966–70) ने अपने रिपोर्ट में लोक सेवकों द्वारा हड़ताल पर पूर्ण निषेध का प्रस्ताव किया। इसी क्रम में उल्लेखनीय है वर्ष 1968 में 'परम आवश्यक सेवा रखरखाव कानून' (ESMA) पास किया गया जो सरकार को देश की किसी आवश्यक सेवा में हड़ताल को अवैध करने का अधिकार देता है। जैसा कि मई 1998 में दिल्ली अस्पतालों की नर्सों के मामले में किया गया था।

सन् 1990 से पूर्व तक भारत में सरकारी कार्मिकों की हड़ताल का लम्बी अवधि तक चलना एक सामान्य बात थी किन्तु अब हड़ताल की अवधि अधिक समय तक नहीं रह पाती है। बहुधा यह भी देखने में आता है कि हड़ताल में सरकार के विरूद्ध रहने वाले कार्मिक संघ समझौते में हड़ताल की अवधि का वेतन प्राप्त करने का कोई–न–कोई समाधान प्राप्त कर लेते है। **'काम नहीं तो वेतन नहीं'** का सिद्धान्त कुछ सरकारें तो दृढ़ता से क्रियान्वित करती हैं जबकि कुछ सरकारें इस ओर उदारता बरतती हैं। कर्मचारी हड़ताल के मूल्य में कई बार राजनीतिक शतरंज भी बिछाई जाती है। कर्मचारी नेताओं या संघ के पदाधिकारियों के सरकार तथा अन्य महत्वपूर्ण दबाव समूहों के साथ कई प्रकार के आन्तरिक समझौते होते रहे हैं। हड़ताल की समस्या केवल भारत में ही नहीं अपितु, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका तथा इंग्लैण्ड में भी है। यद्यपिह हड़ताल जैसी प्रवृत्ति के समर्थन में न तो जनता है, न सरकार है और न सम्पूर्ण कार्मिक वर्ग, फिर भी कई बार हड़ताल करनी पड़ जाती है। दरअसल विगत सदीं में हड़तालों से कार्मिक एवं श्रमिक वर्ग ने बहुत कुछ पाया है। सन् 1905 की हड़तालों से ड्यूटी अवधि 12 घण्टे हुई तो सन् 1920 में यह 10 घण्टे हुई। मुम्बई कपड़ा मिल की इस हड़ताल (1920) से दुर्घटना मुआवजा भी मिलने लगा। सन् 1927 की जमशेदपुर हड़ताल से भविष्य निधि व्यवस्था शुरू हुई तो सन् 1940 की हड़तालों के पश्चात् महँगाई भत्ता मिलने लगा। एक ओर हड़ताल निरीह श्रमिकों का प्रभावी अस्त्र रहा है तो दूसरी ओर अब यह सरकारी कार्मिकों के आतंक का पर्याय भी बन गया है। यही कारण है कि सन् 2003 से **सर्वोच्च न्यायालय ने हड़तालों पर प्रतिबन्ध लगा दिया है।** सन् 2001 में तमिलनाडू में जयललिता सरकार ने 1.76 लाख हड़ताली कार्मिकों को बर्खास्त कर दिया था। दो वर्ष पश्चात् सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकरण में स्पष्ट किया कि सरकारी कार्मिकों को हड़ताल करने का कोई अधिकार नहीं है। लिखित माफी माँगने तथा भविष्य में हड़ताल नहीं करने का वचन देने वाले कार्मिक राज्य सेवा में वापिस लिए जा सके थे। हड़ताल के पक्ष तथा विपक्ष में दिए जाने वाले तर्क निम्नलिखित हैं–

लोक सेवकों की हड़ताल

1.	हड़ताल कर्मचारी एकता की प्रतीक है।	लोक सेवकों का कार्य सार्वजनिक हितों का संवर्धन करना हैं अतः हड़ताल गैर कानूनी कृत्य है।
2.	अन्याय तथा शोषण के विरूद्ध प्रदर्शन	सरकारी कार्मिकों को पर्याप्त सेवा सुरक्षा

	करना जायत है।	प्राप्त है अतः उन्हें इस प्रवृत्ति को नहीं अपनाना चाहिए।
3.	यह लोकतांत्रिक तरीके से किया जाने वाला विरोध प्रदर्शन है।	लोक कार्मिक हड़ताल से जनसाधारण को मिलने वाली सुविधाएँ ठप्प हो जाती हैं जो जनता के साथ अन्याय है।
4.	जब बार–बार ज्ञापन देने पर भी सरकार सुनवाई न करे तो कार्मिकों के पास रास्ता ही क्या बचता है?	भारत में आज भी एक तिहाई लोग गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। ऐसे मे सरकारी कार्मिकों को अधिक सुविधा देने का क्या औचित्य हैं?
5.	यदि किसी कार्मिक की कार्य करने की इच्छा नहीं है तो उसे मजबूर कैसे किया जा सकता है ?	हड़ताल प्रदर्शन करना अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना करने के समान है।
6.	हड़ताल तो नियोक्ता के विरूद्ध होती है, राज्य के विरूद्ध नहीं।	सरकार का सारा धन कार्मिक विकास के लिए ही नहीं है, उसे सामाजिक–आर्थिक विकास हेतु भी अनेक कार्य करने होते हैं।
7.	जब निजी क्षेत्र के कार्मिक स्वतंत्रतापूर्वक हड़ताल कर सकते हैं तो लोक सेवकों पर ही प्रतिबन्ध क्यों ?	सरकार के पास संसाधनों की कमी है। ऐसे में वह कार्मिकों को अधिक सुविधाएँ कहाँ से दे?
8.	सरकार एक आदर्श नियोक्ता है उसे अपने सेवकों के शोषण का कोई अधिकार नहीं है।	हड़ताल करने से राष्ट्र की प्रगति प्रभावित होती है।

9.7 सारांश

कर्मचारी संघों का मूलभूत लक्ष्य सेवा शर्तो के लेकर कर्मचारियों कि जो असहमतियाँ है उन्हें सरकार द्वारा हल किया जाए। कर्मचारी संघ इसके लिए सामूहिक विमर्श, सामूहिक सौदेबाजी तथा प्रत्यक्ष कार्यवाही का रास्ता अपनाते हैं। अपने हितों की सुरक्षा हेतु कर्मचारी संघों ने संस्था बनाने का अधिकार, मान्यता प्राप्त करने का अधिकार, प्रतिनिधित्व का अधिकार तथा सदस्यता प्रदान करने का अधिकार आदित्य सशक्त मांग की है। ये संवादात्मक लोकतांत्रिक पद्धति से विवादों का समाधान चाहते हैं। कर्मचारी संघों की उपादेयता सरकार और कर्मचारियों के मध्य सद्भावपूर्ण संबंध निर्मित करने में है। इस प्रकार स्थिति प्राप्त करने में सरकारों द्वारा बनाये कानूनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत में हिंसक प्रदर्शन एवं हड़ताल को अनुशासन की दृष्टि से गलत ठहराया गया है। कर्मचारी संघ अपने रचनात्मक क्रियाशीलता द्वारा सद्भावपूर्ण वातावरण प्रशासन में कुशलता वृद्धि और सुशासन पूर्ण प्रशासन की स्थापना में सहयोग कर सकते हैं।

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) कर्मचारी संघ के कार्य एवं उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

(2) कर्मचारी संघ क्यों आवश्यक है? इसके पक्ष में तर्क प्रस्तुत कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) 'द हेच एक्ट' कब पास किया गया ?

(A) 1939

(B) 1940

(C) 1960

(D) 1961

(2) भारत में 'परम आवश्यक सेवा रख–रखाव कानून' कब पास किया गया ?

(A) 1967

(B) 1997

(C) 1998

(D) 1968

(3) केन्द्रीय सिविल सेवाएँ नियम कब पास किया गया ?

(A) 1952

(B) 1953

(C) 1955

(D) 1956

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) A (2) D (3) C

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई– 10 संयुक्त परामर्शदायी मशोनरी

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 परिचय

10.2 संयुक्त परामर्शदायी का उद्भव एवं विकास

10.3 कर्मचारी परिषदों के प्रमुख कार्य

10.4 संयुक्त परामर्श मशीनरी तथा अनिवार्य पंच निर्णय

10.5 सारांश

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.1 उद्देश्य

इस इकाई के पाठय सामग्री के अध्ययन के बाद आप :

- सिविल सेवा कर्मचारी संबंधों में संयुक्त परामर्श तंत्र के महत्व को समझ सकेंगें।
- संयुक्त परामर्श तंत्र के उद्भव एवं विकास को स्पष्ट कर सकेंगें।
- संयुक्त परामर्श तंत्र की भूमिका का मूल्यांकन कर सकेंगें। तथा
- उनके सुधार की संभावना पर विमर्श कर सकेंगें।

10.1 परिचय

जब हम नागरिक सेवा और कर्मचारी संबंधों पर अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि कर्मचारी समूह चाहते हैं कि उनके साथ मानव जैसा व्यवहार किया जाए कर्मचारी चाहते हैं कि उनके समस्याओं का समाधान शान्तिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक पद्धति से हो और इसके लिए एक अस्थाई व्यवस्था कायम की जानी चाहिए।

पूर्वकाल में नागरिक सेवा में सरकार और कर्मचारी संबंधों का संचालन पारम्परिक विधि से होता था। जिसमें सरकारी कर्मचारियों से राज्य के प्रति पूर्ण स्वामी भक्ति की अपेक्षा की जाती थी। जिसके फलस्वरुप सेवा शर्तें सरकार द्वारा एकतरफा निर्धारित किया जाता था। इसमें कर्मचारियों की राय नहीं ली जाती थी।

इस स्थिति से निपटने के लिए कर्मचारी समूह ने हड़ताल का सहारा लिया और दबाव डाला कि नियोक्ता और कर्मचारी के मध्य सद्भावपूर्ण संबंध होना चाहिए। आधुनिक लोकतांत्रिक सरकारें समाज के विकास के लिए सुशासन की ओर बढ़ रही हैं। ऐसे में कर्मचारियों का सक्रिय सहयोग अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। कर्मचारियों की कार्यकुशलता पर ही नीतियों सफल क्रियान्वयन निर्भर करता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि कर्मचारियों और नियोक्ता के मध्य विश्वासपूर्ण संबंध होना चाहिए। इसके लिए एक संयुक्त परामर्श तंत्र को स्थापित करने पर बल दिया गया इसकी भूमिका सरकार तथा उनके कर्मचारियों के बीच सदभावनापूर्ण संबंधों को बढ़ाना है।

10.2 संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी का उद्भव एवं विकास

सन् 1919 में ब्रिटेन में उपजी व्हिटलेवाद की धारणा ने ब्रिटेन सहित सभी राष्ट्र मंडलीय देशों में के कर्मचारियों में चेतना का संचार किया। इसके द्वारा ब्रिटेन में सिविल सेवा कर्मचारी संबंधों में सुधार लाने का प्रयास किया गया व्हिटलेवाद में औपचारिक तथा अनौपचारिक सलाहों तथा समझौतों के द्वारा किसी सहमति पर पहुंचने का प्रयास किया जाता है। संक्षेप में कहें तो सिविल सेवा में कर्मचारी संबंधों की देखरेख व्हिटले परिषदों की सहायता से की जाती है।

सन् 1946 में भारत सरकार ने प्रथम वेतन आयोग से विशेष रूप से लोक सेवा की परिस्थितियों संबंधी प्रश्नों एवं विवादों को सुलझाने के लिए उपयुक्त प्रणाली के सन्दर्भ में भी प्रतिवेदन देने को कहा था। आयोग ने स्वीकारा की भारत में अधिकांश श्रेणियों के कर्मचारी इस बात के प्रति डरे हैं कि शायद ही कभी सरकार उनकी शिकायतों एवं मांगों पर ध्यान देती है। आयोग ने माना कि भारत में भी ब्रिटेन की व्हिटले परिषदों की भाँति स्टाफ परिषदें होनी चाहिए। आयोग ने सुझाव दिया था कि सरकार तथा उसके कर्मचारियों के मध्य व्याप्त भेदभाव के समायोजन का सर्वोत्तम मार्ग यह है कि मतभेदों को विवादों का रूप धारण करने से पहले सुलझा दिया जाए। इसी क्रम में विदित है कि द्वितीय वेतन आयोग ने सरकार और कर्मचारियों के विवादों के समाधान के लिए समुचित वार्तातन्त्र की स्थापना का सुझाव दिया। सन् 1952 में भारत में व्हिटले योजना की स्थापना का निर्णय ले लिया गया। परन्तु 1954 में जाकर सरकार ने अपने सभी मंत्रालयों से कर्मचारी परिषदों की स्थापना का आग्रह किया। हालांकि इससे पहले सन् 1949 में डाक–तार विभाग में मासिक बैठक व्यवस्था और सन् 1952 में रेलवे में एक स्थायी समझाता प्रणाली (PNM) प्रारम्भ हो चुकी थी। इसी क्रम में रक्षा मंत्रालय में सन् 1954 में संयुक्त समझौता प्रणाली का शुभारंभ हो चुका था। गृह मंत्रालय ने सन् 1957 में कर्मचारी समितियों का नाम बदलकर कर्मचारी परिषदें कर दिया। प्रत्येक मंत्रालय में ब्रिटिश विभागों की तरह एक कल्याण अधिकारी भी नियुक्त कर दिया गया जो कर्मचारियों के मनोरंजन, खान–पान, कार्य–दशा, स्वास्थ्य, यातायाता, आवास, बच्चों की शिक्षा तथा सेवानिवृत्ति आदि विषयों को देखता था। कर्मचारी परिषदें दो प्रकार की है–

(1) **वरिष्ठ कर्मचारी परिषद की संरचना** – इसमें द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी के केंद्रीय सेवाओं के कार्मिक सम्मिलित हैं। इस परिषद में 7 से 10 तक सरकारी प्रतिनिधि तथा प्रत्येक 20 कर्मचारी पर एक निर्वाचित प्रतिनिधि कर्मचारियों की ओर शामिल होता है। पहले यह परिषद एक वर्ष के लिए गठित होती थी लेकिन 1957 से दो वर्ष के लिए गठित होने लगी। मंत्रालय का सचिव या संयुक्त सचिव इसका अध्यक्ष होता है।

(2) **कनिष्ठ कर्मचारी परिषद की संरचना** – यह परिषद चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की होती है। सरकार की ओर से उपसचिव को इस परिषद की अध्यक्षता दी जाती है। कर्मचारियों की तरफ से दो समूहों में प्रतिनिधि निर्वाचित किए जाते हैं। एक समूह में दफ्तरी तथा अभिलेख पृथक्कार और दूसरे समूह में चपरासी, जमांदार, फर्राश तथा झाड़ू लगाने वाले अपने–अपने प्रतिनिधि चुनते हैं। इन परिषदों की बैठक प्रत्येक तीन माह में एक बार होती है। जिसके द्वारा सरकार और कर्मचारियों के मध्य संवाद स्थापित होता है। इसके द्वारा कर्मचारी अपनी समस्याओं को सरकार के समक्ष उठाते हैं।

10.3 कर्मचारी पार्षदों के प्रमुख कार्य

कर्मचारी पार्षदों के निम्नांकित कार्य हैं–

(1) कार्यशैली में सुधारो हेतु प्रस्तुत सुझावों पर विचार करना।

(2) कर्मचारियों की सेवा संबंधी शर्तों को प्रभावित वाले तथ्यों के संबंध में सरकार को उनका दृष्टिकोण प्रकाश में लाने के लिए साधन प्रदान करना, तथा

(3) अधिकारियों तथा कर्मचारियों के बीच व्यक्तिगत संपर्क के लिए साधनों का निर्माण करना जिससे उनमें सद्भावपूर्ण संबंध विकसित होते रहें साथ ही कर्मचारी वर्ग को उत्साह मिलता रहे जिससे ये अपने कार्य को अधिक लगन से करें।

समालोचनात्मक दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि ये परिषदें ब्रिटेन के व्हिटले परिषदों के प्रतिमान पर स्थापित तो की गई परंतु इनकी कार्य पद्धति व्हिटले परिषदों के मूल दर्शन के समीप नहीं है। इन परिषदों से जो अपेक्षा की गयी थी उन अपेक्षाओं पर ये खरे नहीं उतरे।

10.4 संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी तथा अनिवार्य पंच निर्णय

10 अक्टूबर 1966 को भारत सरकार ने कर्मचारी पार्षदों के व्हिटले पार्षदों के समान यथार्थ रूप देने के लिए एक योजना प्रस्तुत की। वास्तव में द्वितीय वेतन आयोग, प्रशासनिक सुधार आयोग तथा सन् 1966 में केंद्रीय कर्मचारियों की हड़ताल ने सरकार को यह सोचने को बाहर बाध्य किया कि एक व्यावहारिक संयुक्त परामर्श

मशीनरी ही कर्मचारी और सरकार के संबंधों को सुधार सकता है। इसके परिणामस्वरूप संयुक्त परामर्श मशीनरी (J.C.M.) तथा अनिवार्य पंच निर्णय की योजना में संयुक्त परिषदें भी स्थापित की गईं। इसका उद्देश्य सरकार द्वारा कर्मचारियों से रिश्ते सुधारना, सामान्य महत्त्व के प्रश्नों पर सहयोग बढ़ाना तथा सिविल सेवाओं की क्षमता में वृद्धि करना है।

संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी के उद्देश्य–

संयुक्त परामर्श मशीनरी के निम्नांकित उद्देश्य है–

(1) शासन और उसके कर्मचारियों में सद्भावना पूर्ण संबंध उत्पन्न करना।

(2) शासन और कर्मचारियों के सामान्य निकाय के मामलों में सामान्य महत्व के प्रश्नों पर सहयोग बढ़ाना।

(3) लोक सेवाओं की क्षमता में सुधार करना। तथा

(4) भर्ती, पदोन्नति तथा अनुशासन संबंधी सामान्य सिद्धान्तों पर विचार–विमर्श करना।

संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी की संरचना–

संयुक्त वार्तातंत्र एक त्रिस्तरीय व्यवस्था है। इसका प्रत्येक स्तर संगठन और कार्य की दृष्टि से पूर्णतः स्वतंत्र होता है। त्रिस्तरीय व्यवस्था इस प्रकार है : शीर्ष संस्था के रूप में राष्ट्रीय परिषद अलग–अलग मंत्रालय के स्तर पर विभागीय परिषद और स्थानीय समस्याओं से निपटने के लिए प्रत्येक क्षेत्रीय स्तर पर कार्यालय परिषदें।

राष्ट्रीय परिषद–

यह सर्वोच्च निकाय है। इसमें सरकार एवं कर्मचारियों दोनों पक्षों के प्रतिनिधित्व होते हैं। मंत्रिमंडलीय सचिव इसका अध्यक्ष होता है। सरकारी पक्ष के सदस्यों की संख्या 25 होती है, जो केंद्रीय सरकार के द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। कर्मचारियों के द्वारा 60 सदस्य मान्यता प्राप्त कर्मचारी सभा द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। कर्मचारी पक्ष अपने सदस्यों में से एक नेता चुनता है। राष्ट्रीय परिषद न्यूनतम पारिश्रमिक, महँगाई भत्ता, लिपिक, चपरासी तथा निम्न श्रेणी के कर्मचारियों से संबंधित मामलों पर विचार करती है।

विभागीय परिषदें–

संयुक्त परामर्श मशीनरी में प्रत्येक विभाग के लिए विभागीय परिषद की व्यवस्था है। सेविवर्ग और प्रशासनिक सुधार विभाग की एक परिषद है। इसका संबंध केंद्रीय सचिवालय सेवा के कर्मचारियों से है। मंत्रालय का सचिव सरकारी प्रतिनिधि होता है और वही विभागीय परिषद का अध्यक्ष होता है। सरकारी पक्ष में अधिक से अधिक 10 प्रतिनिधि शासन द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। कर्मचारी पक्ष में 20 से 30 तक सदस्य हो सकते हैं।

क्षेत्रीय कार्यालय परिषदें–

क्षेत्रीय परिषदों का संबंध किसी क्षेत्रीय मुद्दों से होता है और ये परिषदें कर्मचारियों की कल्याण, क्षमता और कार्य के स्तर के विकास पर विचार करती हैं। कार्यालय परिषद में 5 सरकारी कोटे और 8 कर्मचारी पक्ष के सदस्य होते हैं।

अनिवार्य पंच निर्णय–

दो पक्षों में मतभेद की स्थिति में संयुक्त परामर्श मशीनरी के द्वारा अनिवार्य पंच निर्णय की व्यवस्था की गयी है। ऐसी परिस्थिति में यदि राष्ट्रीय परिषद अथवा सम्बद्ध विभागीय परिषदों में कोई समझौता नहीं हो पाता तो निम्नांकित मामलों में निर्णय किया जाता है–

(1) वेतन और भत्ते।

(2) सप्ताह में काम के घंटे। तथा

(3) अवकाश।

पंचनिर्णय मंडल के निर्णयों से दोनों पक्ष बाध्य होते हैं। उन पर संसद का सर्वोपरि अधिकार अवश्य होता

है। उल्लेखनीय है कि पंचनिर्णय मण्डल के निर्णय दोनों पक्षों के लिए बाध्यकारी होते है, लेकिन संसद इन मामलों पर कानून बना सकती है। कहने का भाव यह है कि संसद को ही पंचनिर्णय मण्डल के मामलों पर कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है।

संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी की स्थापना सरकारी कर्मचारियों एवं राजनीतिक कार्यपालिका के मध्य संवाद एवं सहयोग को बढ़ावा देने के लिए किया गया है। इसमें कर्मचारियों की समस्याओं को संज्ञान में लेते हुए इसके समाधान के प्रयत्न को शामिल किया जाता है। यह एक ऐसा प्लेटफार्म है जिसमें कर्मचारियों के प्रतिनिधि और प्रशासनिक अधिकारी सम्मिलित होते हैं। इसके माध्यम से कर्मचारी वर्ग द्वारा अपनी चिंताओं और मुद्दों को व्यक्त किया जाता है। संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी और अनिवार्य पंच निर्णय के द्वारा कर्मचारियों के मध्य सहयोग और टीम भावना का विकास होता है। यह प्रणाली कर्मचारियों की समस्याओं का समाधान करने में सहायक सिद्ध हुई है। इसके माध्यम से प्रशासन को कर्मचारियों के विचारों और सुझावों से अवगत होने का अवसर प्राप्त होता है। जिससे उचित नीतियों को बनाने में सहायता मिलती है।

संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी के द्वारा प्रशासक एवं कर्मचारी के मध्य सशक्त एवं समन्वपूर्ण संबंध स्थापित होते हैं। फलतः कर्मचारियों और प्रबन्ध के बीच स्वस्थ और सकारात्मक संबंध निर्मित होता है। सारतः हम कह सकते हैं कि संयुक्त परामर्शदायी मशीनरी नीतिगत और प्रशासनिक मुद्दों पर विचार–विमर्श करके उन्हें हल करने का महत्वपूर्ण साधन है। यह कर्मचारियों की शिकायतों का त्वरित और प्रभावी समाधान सुनिश्चित करती है जिससे संगठन में संतुलन और सकारात्मक वातावरण बना रहता है। इसके साथ यह भी जोड़ा आवश्यक है कि इसकी सफलता के लिए दोनों पक्षों– प्रबन्धन और कर्मचारी के मध्य पारस्परिक विश्वास, खुला विचार विनिमय और समयबद्ध से निर्णय लेना आवश्यक है।

10.5 सारांश

यह बात पूर्णतः स्पष्ट है कि भारत में कार्मिक प्रशासन के क्षेत्र में सिविल सेवा कर्मचारी संबंधों प्रकरण अत्यन्त महत्वपूर्ण होता चला जा रहा है। चतुर्थ वेतन आयोग (1986) ने संयुक्त परामर्श मशीनरी (तंत्र) का अनुमोदन कर दिया और इसका कार्य संतोषजनक पाया। पंचम वेतन आयोग ने अपनी रिपोर्ट में संयुक्त परामर्श मशीनरी को सरकार और कर्मचारियों की आपसी समस्याओं के समाधान के लिए एक उपयोगी मंच बताया। आयोगों के सकारात्मक मत के बाद भी यह कहा जाता है कि भारत में संयुक्त परामर्श मशीनरी की व्यवस्था अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं हुई है। भारत में नियोक्ता कार्मिक संबंध अभी भी अनेक समस्याओं से ग्रस्त हैं। इस दिशा में राष्ट्रीय वेतन नीति तथा व्यावहारिक सेवा शर्तों का निर्माण तत्क्षण किया जाना ही न्याय का मानदंड होगा।

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) भारत सरकार में संयुक्त परामर्श मशीनरी के विकास पर प्रकाश डालिए।

(2) संयुक्त परामर्श मशीनरी की राष्ट्रीय परिषद् की भूमिका का परीक्षण कीजिए।

(3) संयुक्त परामर्श मशीनरी की योजना में विभागीय परिषद् एवं अनिवार्य पंच निर्णय की महत्ता को रेखांकित कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) व्हिटलेवाद की धारणा का जन्म ब्रिटेन में कब हुआ ?

(A) 1917

(B) 1918

(C) 1919

(D) 1920

(2) भारत में व्हिटले योजना को स्थापना का निर्णय कब लिया गया ?

(A) 1952

(B) 1953

(C) 1954

(D) 1955

(3) राष्ट्रीय परिषद् की अध्यक्षता कौन करता है ?

(A) मंत्री

(B) राष्ट्रपति

(C) मंत्रिमण्डलीय सचिव

(D) संयुक्त सचिव

(4) कर्मचारी परिशदों को व्हिटले परिशदों के समान रूप देने की बात कब कही गयी ?

(A) अक्टूबर 1966

(B) जनवरी 1967

(C) मार्च 1970

(D) अगस्त 1972

(5) अनिवार्य पंच निणय किन मामलों पर विचार करती है ?

(A) वेतन और भत्ते

(B) अवकाश

(C) सप्ताह में काम के घंटे

(D) उपर्युक्त सभी

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) C (2) A (3) C (4) A (5) D

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई– 11 सार्वजनिक सेवकों (कर्मचारियों) के अधिकार

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 परिचय

11.2 संविधान द्वारा प्रत्याभूत नागरिकों के मौलिक अधिकार

11.3 मौलिक अधिकार तथा अन्य अधिकारों का वर्गीकरण

11.4 व्यक्तिगत अधिकार

11.5 नागरिक अधिकार

11.6 सार्वजनिक सेवकों के बारे में वैचारिक अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता

11.7 भारत में सार्वजनकि सेवकों/कर्मचारियों की आचार संहिता

11.8 सार्वजनिक सेवकों के सेवा सम्बन्धी अधिकारी

11.9 सारांश

11.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- नागरिकों तथा लोक सेवकों (कर्मचारियों) के कौन से स्वीकृत मौलिक अधिकार तथा अन्य अधिकार जो संविधान द्वारा प्रदान किए गये हैं उन्हें जान एवं समझ सकेंगें।
- सरकार ने अपने सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों पर क्या प्रतिबन्ध लगाई है समझ सकेंगें।
- सरकारी कर्मचारियों के कौन से सेवा सम्बन्धी अधिकार हैं, उसे जान सकेंगें।

11.1 परिचय

दुनिया के जिन–जिन देशों में संविधान के द्वारा मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई है, वहाँ के नागरिकों के साथ जन्म, जाति, नस्ल तथा लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता। सार्वजनिक सेवक (कर्मचारी) नागरिक होते हैं और उन्हें भी मौलिक अधिकार मिले हुए हैं। लेकिन इसी क्रम में संविधान ने राज्य सरकार को यह अधिकार दिया है कि वह अपने सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों का नियमन करें तथा उन पर उत्तरदायित्व भी आरोपित करें।

देशों के सामाजिक सांस्कृतिक चेतना, राजनीतिक संरचना और प्रशासनिक व्यवस्था के अनुरूप ही सार्वजनिक सेवकों को यह अधिकार प्राप्त हुए हैं। सार्वजनिक सेवक भी नागरिक होते हैं, लेकिन वह कर्मचारी होते हैं, जिससे उनकी भूमिका बढ़ जाती है क्योंकि उन्हें राज्य की विधि–व्यवस्था को बनाए रखने में काम करना होता है। सरकार की क्रियाशीलता इन्हीं सार्वजनिक सेवकों के माध्यम से दिखाई देती है। सरकारी कार्यक्रमों और सेवाओं को प्रभावी रूप से सार्वजनिक सेवक लागू करते हैं। सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों पर विचार–विमर्श करते हुए हम देखेंगे कि कर्मचारियों के अधिकारों पर सरकार ने क्या प्रतिबन्ध लगाया है।

11.2 संविधान द्वारा प्रत्याभूत नागरिकों के मौलिक अधिकार

मौलिक अधिकारों से तात्पर्य है वे अधिकार जो देश के मौलिक कानून द्वारा प्रदान किए जाते हैं एवं जिनको संविधान के समान अल्लंघनीय माना जाता है। मौलिक अधिकार समान रूप से देश के नागरिकों एवं लोक सेवकों के व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इसके द्वारा लोक सेवक कर्मचारी होने के साथ–साथ नागरिक होने के अधिकारों का भी लाभ उठा पाते हैं। हमारे संविधान में नागरिकों को अनेक प्रत्याभूत मौलिक अधिकार प्रदान किए गए हैं। इनका वर्गीकरण इस प्रकार है–

(1) समता का अधिकार (अनु0 14–18)

(2) स्वतन्त्रता का अधिकार (अनु0 19–22)

(3) शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनु0 23–24)

(4) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनु0 25–28)

(5) सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार (अनु0 29–30)

(6) संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनु0 32)

संभव है कि दण्ड के विरुद्ध सुरक्षा तथा जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की सुरक्षा से जुड़े अधिकार निलंबित किए जा सकते हैं। इसी प्रकार सार्वजनिक सेवाओं के सन्दर्भ में कुछ प्रतिबन्ध लगाए जा सकते है। इसी तर्क प्रणाली के अनुसार स्पष्ट है कि राज्य सार्वजनिक सेवकों पर कुछ प्रतिबन्ध लगा सकता है।

11.3 मौलिक अधिकार तथा अन्य अधिकारों का वर्गीकरण

इन्हें निम्नांकित विधि से वर्गीकृत किया जा सकता है–

(1) व्यक्तिगत अधिकार

(2) नागरिक अधिकार

(3) राजनीतिक अधिकार

(4) श्रमिक संघ बनाने का अधिकार

(5) सेवा या सर्विस का अधिकार

11.4 व्यक्तिगत अधिकार

व्यक्तिगत अधिकारों की विवेचना निम्न प्रकार से की जाती है–

(A) जीवन तथा स्वतन्त्रता का अधिकार :–

एक व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन को अन्तरात्मा का विषय माना जाता है तथा इस स्वतन्त्रता को प्रत्येक राज्य प्रदान करता है। भारतीय संविधान की धारा 21 के अनुसार सभी को अपने जीवन तथा स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए अधिकार दिया गया है। इस सन्दर्भ में अनु0 21 के अनुसार ''किसी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के बिना उसके जीवन या स्वतन्त्रता से उसको वंचित नहीं किया जा सकता।'' इसमें कहीं आने जाने तथा गतिशील रहने की आजादी भी निहित है जो सरकारी कर्मचारियों एवं नागरिकों को समान रूप से प्राप्त हैं।

(B) विधि के समक्ष समानता तथा विधि का समान संरक्षण :–

अनुच्छेद 14, 15 के विधिक व्याख्या के अनुसार राज्य अपने नागरिकों में धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग एवं जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा। लेकिन यहाँ उल्लेखनीय है कि सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के पक्ष में विधिक रूप से संरक्षित भेदभाव किया जा सकता है। सरकारी लोक सेवक विधिक रूप से विधि के समक्ष समान हैं।

(C) धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार :–

अनुच्छेद 25–28 के अन्तर्गत धर्म की स्वतन्त्रता के अधिकार को स्पष्ट किया गया है। इसमें प्रत्येक नागरिक को अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता तथा अपने धर्म का प्रचार–प्रसार एवं व्यवहार का अधिकार दिया गया है। लेकिन इसकी कुछ अपनी मर्यादा भी है।

(D) निजी सम्पत्ति का अधिकार :–

इस अधिकार के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को सम्पत्ति रखने, अधिग्रहण करने तथा बिक्री करने का अधिकार होगा। इसमें किसी भी व्यवसाय को करने का अधिकार दिया गया है।

(E) सार्वजनिक सेवकों (कर्मचारियों) का प्रश्न :–

सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों के संबंध में देखें तो ज्ञात होता है कि राज्य उनके व्यक्तिगत आचरण, व्यवहार तथा निजी संबंधों का नियमन करता है। ताकि वे सार्वजनिक कार्यालय में गरिमा, विश्वास, प्रतिष्ठा तथा दृढ़ चारित्रिक क्षमता का परिचय दे सकें।

सरकार सार्वजनिक सेवकों के आचरण एवं व्यवहार का नियमन निर्धारण करती है। इस सन्दर्भ में प्रबल तर्क यह है कि सरकार तथा नागरिक सेवकों (कर्मचारियों) के सम्बन्ध संविदा पर आधारित होते हैं। संविदा आधारित प्राकृतिक के कारण ही आचरण–व्यवहार नियमों का निर्धारण करने का अधिकार सरकार के पास आ जाता है। इसे सार्वजनिक सेवकों के मौलिक अधिकारों का हनन नहीं कर सकते। क्योंकि प्रशासनिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए नागरिक सेवकों पर सरकारी आचरण के बहुत सारे नियम लागू हो जाते हैं।

11.5 नागरिक अधिकार

यह तथ्यगत सत्य है कि नागरिकों की तुलना में सार्वजनिक कर्मचारियों की नागरिक स्वतंत्रताएँ कहीं ज्यादा मर्यादित होती हैं। क्योंकि उन्हें राज्य द्वारा प्रदत्त विशेष कर्तव्यों को पूर्ण करना होता है, साथ ही जिस पद पर वह नियुक्त होते हैं उसी अनुरूप उन पर विशेष उत्तरदायित्व लागू हो जाता है। सार्वजनिक सेवकों के जीवन आचरण (कार्यालय तथा व्यक्तिगत दोनों) का राज्य द्वारा अधिक नियमन किया जाता है, जिससे उनकी प्रतिष्ठा तथा व्यक्तिगत अस्मिता दोनों ही गहरे से प्रभावित होती है।

संविदा का अधिकार :–

समस्त नागरिकों को संविदा करने की स्वतन्त्रता मौलिक अधिकार के रूप में प्रदान की गई है। लेकिन सार्वजनिक कर्मचारियों के निष्पक्षता को बनाए रखने के लिए संविदा के अधिकार को सीमित एवं मर्यादित कर दिया गया है। फलतः इन्हें निम्न कार्य करने के सन्दर्भ में अधिकार प्राप्त नहीं है–

- ये किसी प्रकार के सट्टेबाजी में भाग नहीं लेंगे।
- उनका कोई भी पारिवारिक सदस्य व्यापार नहीं करेगा।
- वे अपने कार्य क्षेत्र में रहने वाले किसी व्यक्ति को कर्जा नहीं देंगें।
- उन्हें एक निश्चित सीमा के बाद सम्पत्तियाँ खरीदने तथा बिक्री के लिए सरकार की पूर्व अनुमति लेनी होगी।

सार्वजनिक सेवकों के दोष निवारण का अधिकार :–

संसदीय लोकतन्त्र में सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है वहीं सार्वजनिक सेवक सरकार के अपने–अपने मंत्री के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इस पृष्ठभूमि में सार्वजनिक सेवकों से तटस्थ रहने की अपेक्षा की जाती है। संसदीय प्रशासनिक प्रणाली में मंत्री को ही सार्वजनिक सेवकों के प्रत्येक दोष का उत्तरदायित्व लेना होता है। भारत में नागरिक सेवकों या कर्मचारियों को न्यायालय तथा समाचार पत्र का सहारा लेने से प्रतिबंधित किया गया है। यहाँ जाकर वे सार्वजनिक आलोचना जो उनके गरिमा के विपरीत है उसे वह समाचार पत्रों में प्रकाशित

नहीं करा सकते। फ्रांस में प्रशासकीय न्यायालय की व्यवस्था के कारण लोक सेवकों को वाद न्यायालय में दायर करने का अधिकार प्राप्त है। जिसके अन्तर्गत वे ऐसे प्रशासनिक निर्णयों का प्रतिरोध कर सकते हैं जिसका नागरिक सेवा पर विपरीत प्रभाव पड़ने की सम्भावना हो। इसी क्रम में विदित है कि भारत में सार्वजनिक सेवकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने व्यक्तिगत प्रसंगों का इस प्रकार संचालन करेंगे जिससे ऋण लेने की अवस्था से बचें, इससे उनकी तथा सरकार की प्रतिष्ठा सुरक्षित होगी।

उपहार लेने पर प्रतिबन्ध :–

सार्वजनिक सेवकों को किसी लक्ष्य के लिए कोष की रचना करने से मना किया गया है। इसका प्रयोग चंदा उगाहने के लिए कर सकते हैं। इसे सार्वजनिक सेवकों के कुशलता एवं सद्–चरित्रता के लिए इसे परम आवश्यक माना गया है। इसी प्रकार इन्हें भेंट या उपहार लेने पर भी मनाही है। क्योंकि जिसके द्वारा ये उपहार प्राप्त करेंगे उसके लाभ के लिए अपने पद एवं शक्ति का दुरुपयोग कर सकते हैं।

11.6 सार्वजनिक सेवकों के बारे में वैचारिक अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता

भारत में सार्वजनिक सेवकों (कर्मचारियों) को सरकार की नीति की आलोचना का अधिकार प्राप्त नहीं है। साथ ही में राजनीतिक दलों की सार्वजनिक विवाद के परिप्रेक्ष्य में अपना विचार प्रकट नहीं कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में फ्रांस और जर्मनी का प्रतिमान उदारपूर्ण है। क्योंकि फ्रांस में नागरिक अधिकारी को यह अधिकार प्राप्त है कि वह चाहे तो कार्यालय के बाहर सरकार की आलोचना एवं सरकार की सामान्य नीति के विरुद्ध अपना मत प्रकट कर सकता है। इसी प्रकार पश्चिमी जर्मनी में भी सार्वजनिक सेवक सरकार की राजनीतिक नीतियों की व्यक्तिगत आलोचना कर सकते हैं।

भारतीय नागरिक सेवा नियमावली के अनुसार सार्वजनिक सेवकों को सरकार के किसी नीति की आलोचना करने का अधिकार नहीं है। इनको किसी ऐसे मुद्दों पर अपना विचार प्रकट करने का अधिकार नहीं जिससे विधि–व्यवस्था और वैदेशिक संबंधों के लिए संकट उत्पन्न हो। इसी प्रकार किसी गैर–प्राधिकृत जाँच दल के सामने गवाही देने की मनाही है। इन प्रतिबन्धों का भाव यह है कि सार्वजनिक सेवकों को राजनीतिक रूप से तटस्थ रखा जाय। जिससे वे सार्वजनिक विवादों से बचे रह सकें तथा अपने मौजूदा सरकार की निष्ठापूर्वक सेवा कर सकें। ब्रिटेन में नागरिक सेवकों को सार्वजनिक महत्व के गैर–राजनीतिक मुद्दों पर अपना विचार प्रकट करने का अधिकार है।

राजनीतिक मामलों में वैचारिक अभिव्यक्ति का सन्दर्भ :–

भारत में सार्वजनिक सेवकों को किसी भी प्रकार की राजनीतिक गतिविधि या आन्दोलन में सहभाग करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। वे शुद्ध साहित्यिक, वैज्ञानिक, कलात्मक एवं सृजनात्मक प्रकृति के प्रसंगों के अतिरिक्त अन्य किसी मुद्दे पर अपनी सार्वजनिक अभिव्यक्ति नहीं कर सकते। अमेरिका में 1939 के हैच अधिनियम के अनुसार कोई सरकारी कर्मचारी राजनीतिक उद्देश्यों के लिए अपनी प्राधिकृत सत्ता का उपयोग नहीं कर सकता है।

11.7 भारत में सार्वजनिक सेवकों कर्मचारियों की आचार संहिता

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 309 में राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया है कि वह सरकारी सेवकों के लिए आवश्यक आचार–संहिता का निर्माण करें। आचार संहिता के कुछ नियम भारतीय दण्ड विधान में भी अंकित किए गये हैं। सरकार ने विभिन्न वर्गों के सार्वजनिक सेवकों के लिए अलग आचार संहिता का निर्माण किया गया है। अखिल भारतीय सेवा के अधिकारियों के लिए अखिल भारतीय सेवा आचरण नियम 1954, केन्द्रीय सेवाओं के लिए केन्द्रीय सेवा आचरण नियम 1955 और रेलवे सेवा आचरण नियम का निर्माण किया गया है। सामान्यतः भारत में सभी आचार संहिता के आचरण संबंधी नियम प्रायः एक से है। इनका संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है।

(1) **राजनीतिक गतिविधियों पर प्रतिबन्ध**– भारत में सार्वजनिक सेवकों की राजनीतिक गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। कोई भी सार्वजनिक कर्मचारी किसी राजनीतिक दल का न तो सदस्य हो सकता है और न ही राजनीतिक आन्दोलन तथा राजनीतिक कार्यक्रम में भाग ले सकता है। इनके मतदान के अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है।

(2) **संविधान तथा कानून का पालन**– सार्वजनिक सेवकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने कर्तव्यों

का पालन करते समय देश के संविधान एवं कानून के अनुरूप आचरण करें।

(3) **सरकार की आलोचना पर प्रतिबन्ध**– सार्वजनिक सेवक कोई ऐसा मत प्रकट नहीं करेंगे जिससे सरकार की जारी नीतियों की आलोचना होती है।

(4) **उच्च अधिकारियों का सम्मान एवं उसके आदेश का पालन**– उच्च अधिकारी के द्वारा दिए गए नियमानुकुल आदेशों का पालन अधीनस्थ कर्मचारियों को करना चाहिए। कर्मचारियों को अपने दायरे से बाहर अगर कोई आदेश प्राप्त होता है तो उसे विनम्रता से मना कर देना चाहिए।

(5) **कर्तव्यनिष्ठा, सत्यनिष्ठा तथा निष्पक्षता**– सार्वजनिक सेवक के लिए यह अनिवार्य है कि वह सत्यनिष्ठा, कर्तव्यनिष्ठ तथा निष्पक्ष हों। किसी अपने सम्बन्धी व्यक्तियों के लिए अपने पद और सत्ता का दुरुपयोग न करें।

(6) **उपहार एवं चंदा लेने पर निषेध**– सरकार की बिना पूर्वानुमति के कोई भी सरकारी कर्मचारी, उसकी पत्नी अथवा उसके परिवार का अन्य कोई सदस्य 20 से अधिक मूल्य का कोई उपहार स्वीकार नहीं कर सकता है। सार्वजनिक सेवक किसी भी कार्य के लिए चन्दे द्वारा धन संग्रह नहीं कर सकता है।

(7) **गोपनीयता**– किसी भी बाहरी व्यक्ति को ऐसी कोई सूचना या अभिलेख प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध नहीं करा सकता है।

(8) **अचल सम्पत्ति के क्रय–विक्रय पर प्रतिबन्ध**– बिना सरकार को सूचना दिये लोक सेवक कोई अचल सम्पत्ति न तो खरीद सकता है और न बेच सकता है।

11.8 सार्वजनिक सेवकों के सेवा संबंधी अधिकार

सार्वजनिक सेवकों और सरकार बीच का संबंध विशेष होता है। सार्वजनिक रोजगार के प्रकृति के कारण सरकार सार्वजनिक सेवकों को वेतन, पेंशन, अन्य लाभ तथा समय पर पदोन्नति देती है जिससे उनके मन में स्थायित्व एवं सुरक्षा की भावना जन्म लेती है। सार्वजनिक सेवा की ओर लोग दो कारणों से आकर्षित होते हैं– एक तो सामाजिक प्रतिष्ठा और दूसरे आजीवन सेवाकाल के कारण। सार्वजनिक सेवकों को अनेक विशेषाधिकारों सुविधाओं, भत्तों, लाभों तथा पदोन्नतियों से भी शोभायमान किया गया है। सार्वजनिक सेवकों की सेवा शर्तों को कार्यपालिका नियमों तथा प्रशासकीय आदेशों से नियमित किया जाता है। लेकिन ऐसे नियम और आदेश संविधान से प्रेरित होते हैं। कभी–कभी तो सरकार को नियम एवं आदेश निर्मित करते समय लोक सेवा आयोग की सहमति लेनी पड़ती है। उन्हें ऐसे नियमों को विधायिका के समक्ष स्वीकृत लेने के लिए प्रस्तुत करना पड़ता है। इस प्रकार सार्वजनिक सेवक भी संविधान द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों तथा विशेषाधिकारों का लाभ उठाते हैं।

सार्वजनिक सेवकों के अधिकारों को सुनिश्चित करना आशयपूर्ण है जिससे वे अपनी सेवाएँ प्रभावी ढंग से प्रदान कर सके। सार्वजनिक सेवकों को संविधान के प्रावधानों के अनुसार सुरक्षा प्राप्त होती है, विशेषकर उनके कार्यकाल और बर्खास्तगी से सम्बन्धित मामलों में। फलतः इससे वे राजनीतिक दबाव या अनैतिक हस्तक्षेप से बच सकते हैं और निष्पक्षता से काम कर सकते हैं। सार्वजनिक सेवकों को समान अवसर और निष्पक्ष व्यवहार मिलना चाहिए। भेदभाव के बिना उन्हें उनके पदों के अनुसार समान अवसर और प्रोत्साहन मिलना चाहिए। सार्वजनिक सेवकों को एक न्यायसंगत और पारदर्शी वेतन संरचना के अनुसार भुगतान किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त पेंशन, स्वास्थ्य सुविधाएं आदि भी उनके अधिकारों का हिस्सा हैं।

सार्वजनिक सेवकों के लिए कार्यस्थल पर स्वतन्त्रता और सम्मान मिलना चाहिए जिससे वे प्रभावी ढंग से अपने कार्य एवं दायित्वों का निर्वहन कर सकें। यदि किसी सार्वजनिक सेवक के अधिकारों का उल्लंघन होता है, तो उन्हें न्यायिक मार्ग से राहत पाने का अधिकार होना चाहिए। स्पष्टतः कहा जा सकता है कि ये अधिकार ही सार्वजनिक सेवकों को प्रशासनिक एवं नैतिक रूप से कर्तव्यों के निर्वहन के योग्य बनाते हैं। इनको अधिकारों से प्रशासनिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है जिससे वे सार्वजनिक हित में निर्णय लेने में सक्षम हो पाते हैं। इन अधिकारों के साथ–साथ सार्वजनिक सेवकों को अपने कर्तव्यों और दायित्वों के प्रति भी सचेत रहना चाहिए, जिससे वे जनता की सेवा में निष्पक्ष और समर्पित रह सकें। सार्वजनिक सेवकों को अपने कार्यस्थल पर सम्मान और गरिमा का अधिकार है। सम्मान और सुरक्षा के परिवेश में ही वे अपने कर्तव्यों का पालन कुशलता से कर सकते हैं।

11.9 सारांश

सार्वजनिक सेवक प्रबुद्ध लोग होते हैं। सरकार की नीतियों का कुशल क्रियान्वयन इन्हीं पर निर्भर करता है, इसीलिए इन्हें सरकार के नियंत्रण में कार्य करना पड़ता है। यह स्थायी कार्यपालिका के रूप में कार्य करते हैं। अतः इन्हें नागरिकों जैसे अधिकार नहीं दिए गए हैं। सार्वजनिक सेवकों को नियमों तथा अधिनियमों प्रारूप के अनुसार कार्य करना पड़ता है। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि नागरिकों की तुलना में इन्हें बहुत से विशेषाधिकार तथा सुविधाएँ दी गयी हैं। जिससे इनकी समाज में प्रतिष्ठा सार्वजनिक सेवक के बजाय सार्वजनिक अधिकारी की हो गयी है।

11.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) भारतीय संविधान द्वारा नागरिकों को प्राप्त मौलिक अधिकारों की विवेचना कीजिए।

(2) भारत में सार्वजनिक सेवकों/कर्मचारियों की आचार संहिता का विश्लेषण कीजिए।

(3) 'सार्वजनिक सेवकों को राजनीतिक तटस्थता नीति पर सदैव गमन करना चाहिए।' इस कथन की विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) जीवन तथा स्वतन्त्रता का अधिकार किस अनुच्छेद के तहत प्रत्याभूत है ?

(A) अनुच्छेद 15

(B) अनुच्छेद 14

(C) अनुच्छेद 18

(D) अनुच्छेद 21

(2) अमरीका में हैच अधिनियम कब पारित हुआ ?

(A) 1939

(B) 1940

(C) 1941

(D) 1943

(3) किस अनुच्छेद से शक्ति ग्रहण कर सार्वजनिक सेवकों के लिए आचार संहिता बनी ?

(A) अनुच्छेद 309

(B) अनुच्छेद 310

(C) अनुच्छेद 311

(D) अनुच्छेद 312

(4) अखिल भारतीय सेवा आचरण नियम कब बना ?

(A) 1951

(B) 1953

(C) 1955

(D) 1954

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) D (2) A (3) A (4) D

11.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।

इकाई– 12 अभिप्रेरणा एवं मनोबल

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 परिचय

12.2 अभिप्रेरणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

12.3 अभिप्रेरणा की प्रकृति एवं विशेषताएँ

12.4 अभिप्रेरणा के प्रकार

12.5 अभिप्रेरणा के सिद्धान्त या विचारधाराएँ

12.6 मनोबल का अर्थ, महत्व एवं विशेषताएँ

12.7 मनोबल को प्रभावित करने वाले तत्व

12.8 मनोबल एवं अभिप्रेरणा में अन्तर

12.9 सारांश

12.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

- राज्य द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए एक अभिप्रेरित और इच्छुक सिविल सेवा सर्वोत्तम साधन है, इसे समझेंगे।
- अभिप्रेरणा को प्रभावित करने वाले कारकों को समझ सकेंगे।
- अभिप्रेरणा के प्रमुख प्रकार से अवगत हो सकेंगे।
- मनोबल का लोक सेवा में क्या भूमिका है? इसे समझ सकेंगे।
- अभिप्रेरणा एवं मनोबल के अन्तर को समझ सकेंगे।

12.1 परिचय

राज्य और समाज द्वारा वंचित परिणाम प्राप्त करने के लिए एक अभिप्रेरित और इच्छुक लोक सेवा सर्वोत्तम साधन है। अभिप्रेरणा प्रोत्साहनों के द्वारा प्राप्त होता है। इस सामान्य धारणा के विपरीत मौद्रिक प्रोत्साहन अधिक महत्व रखते हैं। तथ्य यह है कि सरकार और कारपोरेट क्षेत्र दोनों में ही प्रशासनिक सिद्धान्त और साथ ही अनुभव से पता चलता है कि गैर मौद्रिक प्रोत्साहन कर्मचारियों को विशेष रूप सरकार के सन्दर्भ में अभिप्रेरित करने में प्रमुख कारक हैं। अभिप्रेरणा और संगठन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। संगठन का सम्बन्ध व्यक्तियों के बीच आपसी सम्बन्धों से है, जबकि अभिप्रेरणा प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा पृथक रूप से किए गए प्रयासों एवं मनोभावों पर अधिक ध्यान देता है। रेन्सिल लिकर्ट ने अभिप्रेरणा को प्रबन्ध का हृदय कहा है।

12.2 अभिप्रेरणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

कार्य करने की इच्छा और क्षमता को समन्वित करने की प्रक्रिया का नाम ही अभिप्रेरणा है। मानव शक्ति के व्यवहार को निर्देशित करने तथा उसका सहयोग प्राप्त करने की कला को अभिप्रेरणा कहते हैं। अभिप्रेरणा प्रबन्ध के मानवीय पक्ष को दर्शाता है। अंग्रेजी शब्द 'Motivation' मूलतः लैटिन शब्द 'Movere' से बना है, जिसका तात्पर्य है गतिशील होना। 'Motivation' शब्द से ही 'Motive' बना है, जिसका अर्थ है 'इच्छाशक्ति को प्रेरित करने का कार्य करना।' इस प्रकार किसी व्यक्ति की कार्य करने की इच्छा को जाग्रत करने के लिए समय–समय पर प्रेरणा देनी होती है जिसे अभिप्रेरणा के नाम से अभिहित किया जाता है।

गिलफोर्ड ने अभिप्रेरणा को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''अभिप्रेरणा एक ऐसा कोई विशेष आन्तरिक कारक है जो क्रिया को आरम्भ करने तथा बनाए रखने की ओर प्रवृत्त करती है।''

12.3 अभिप्रेरणा की प्रकृति एवं विशेषताएँ

अभिप्रेरणा की धारणा मनोवैज्ञानिक धारणा हैं इसका सम्बन्ध उन शक्तियों से है जो अनुयायियों एवं अधीनस्थों को किसी विशिष्ट प्रकार से कार्य करने के लिए प्रेरणा देती है।

अभिप्रेरणा की प्रकृति में निम्नांकित सुधारात्मक तत्व समाहित होते हैं–

(1) आवश्यकताओं के तनाव को कम करने के प्रयास।

(2) सन्तुष्टि का अन्वेषण करना।

(3) स्थिति का पुनः मूल्यांकन तथा नयी जरूरतों की खोज।

(4) अभिप्रेरण प्रक्रिया सदैव चलती रहती है।

अभिप्रेरणा की विशेषताएं :–

(1) अभिप्रेरणा एक समाज–मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है।

(2) सम्पूर्ण व्यक्ति प्रेरित होता है, उसका केवल एक भाग नहीं।

(3) अभिप्रेरणा लक्ष्य द्वारा प्रेरित होती है।

(4) यह एक निरन्तर प्रक्रिया है जो व्यक्ति के अन्दर जारी रहती है।

(5) यह मौद्रिक एवं गैर–मौद्रिक दोनों हो सकती हैं।

(6) अभिप्रेरणा का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मानव सन्तुष्टि से है।

(7) इसके द्वारा कार्य निष्पादन, कुशलता तथा उत्पादकता में वृद्धि होती है।

(8) अभिप्रेरणा प्रक्रिया कार्मिक के मनोबल को बढ़ाती है।

12.4 अभिप्रेरणा के प्रकार

अभिप्रेरणा से सम्बन्धित प्रेरणाओं, कारकों तथा परिस्थितियों को चार भागों में बाँटा जा सकता है।

(1) सकारात्मक अभिप्रेरणा– सकारात्मक अभिप्रेरणा से आशय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा लाभ, पारिश्रमिक, आनन्द, सन्तुष्टि की आशा से कर्मचारी कार्य करने को उत्साहित होते हैं। इसे ही सकारात्मक अभिप्रेरणा कहते हैं। इसमें मौद्रिक पारिश्रमिक देना, पुरस्कार देना, और पदोन्नति के अवसर प्रदान करना शामिल है।

(2) नकारात्मक अभिप्रेरणा– नकारात्मक अभिप्रेरणा वह होती है जिसमें भय, डर, दबाव जैसे नकारात्मक वातावरण से कर्मचारियों को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित किया जाता है। इसके प्रमुख उदाहरण हैं– कार्य पूरा न करने पर वेतन–भत्तों में कटौती करना, पदावनति कर देना, कार्मिकों के विरुद्ध जाँच कार्यवाही करना और पद से हटा देना आदि हैं।

(3) **मौद्रिक अभिप्रेरणा**– जब किसी कर्मचारी को अच्छे कार्य करने के लिए प्रतिफल के रूप में पारितोषिक मुद्रा के रूप में दिया जाता है तो वह मौद्रिक अभिप्रेरणा कहलाता है। भारत में छठें वेतन आयोग मौद्रिक प्रोत्साहन देने के मुद्दे की जाँच की थी। वेतन आयोग ने सरकारी कर्मचारियों के लिए नियमित वेतन के अलावा एक नया कार्य–निष्पादन वित्तीय लाभ लागू करने की अनुशंसा की है।

(4) **अमौद्रिक अभिप्रेरणा**– अमौद्रिक या अवित्तीय अभिप्रेरणा का सम्बन्ध मानसिक सम्बन्ध से है। यह अदृश्य होता है। इसका सम्बन्ध कर्मचारी की सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि से होता है। इसमें शामिल है– कर्मचारियों का सम्मान करना, कार्य की सुरक्षा प्रदान करना, उच्च कार्य दशाएँ उपलब्ध कराना एवं उदार अवकाश नीति अपनाना आदि।

12.5 अभिप्रेरणा के सिद्धान्त या विचारधाराएँ

तथ्यतः अभिप्रेरणा किन्हीं निश्चित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति को प्रेरित करने की क्रिया है। इस क्रिया को उत्तेजित करने हेतु कुछ आवश्यकताओं, चालकों एवं उचित वातावरण का होना परमावश्यक है। इन सन्दर्भों के स्पष्टीकरण हेतु अभिप्रेरणा से सम्बन्धित प्रमुख सिद्धान्तों का संक्षिप्त प्रस्तुति स्वभाविक है।

(1) **द्रव्यात्मक सिद्धान्त**– टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा अभिप्रेरणा के निम्नांकित बिन्दुओं को अभिव्यक्ति करती थी–

- किसी भी संगठन में कार्यशील कार्मिक प्राथमिक तौर पर आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति चाहते हैं, इसके पश्चात् सुरक्षा एवं कार्यदशाओं की माँग पर बल देते हैं, यदि इन आवश्यकताओं पर फोकस किया जाए तो कार्मिकों का मनोबल सकारात्मक रूप से ऊँचा होता है।

(2) **मैस्लो का आवश्यकताओं की क्रमबद्धता का सिद्धान्त**– ख्यातिलब्ध मनोवैज्ञानिक प्रो0 ए0एच0 मैस्लो ने अपनी पुस्तक 'मोटिवेशन एण्ड पर्सनलिटी' में अभिप्रेरणा को मनुष्य की आवश्यकताओं पर आधारित बताते हुए कहा है कि ''मनुष्य पूर्णरूपेण सन्तुष्ट कभी नहीं होता। ज्यों ही उसकी एक आवश्यकता की पूर्ति होती है, उसकी दूसरी आवश्यकता जाग्रत हो जाती है। इस प्रकार आवश्यकताओं पूर्ति की क्रमबद्ध प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है।'' मैस्लो ने प्राथमिकता के आधार पर आवश्यकताओं की क्रमबद्धता को पाँच सोपानों में विभाजित किया है–

प्रथम– शारीरिक आवश्यकताएँ यथा भोजन, आवास तथा काम इत्यादि।

द्वितीय– सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ जैसे– भौतिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक सुरक्षा से है।

तृतीय– सामाजिक आवश्यकताएँ यथा– अपनत्व, प्रेम–स्नेह, आपसी सहमति, समूह की सदस्यता आदि आवश्यकताएँ आती है।

चतुर्थ– सम्मान यश की आवश्यकताएँ यथा– सफलता, सम्मान, हैसियत, पहचान तथा मान्यता सम्बन्धी आवश्यकताएँ।

पंचम– आत्मसिद्धि की आवश्यकताएँ यथा– आगे बढ़ने की इच्छा, सफलता के साथ कार्य में निपुणता एवं विशिष्ट पहचान की आवश्यकता।

(3) **मैकग्रेगर का एक्स–वाई सिद्धान्त**– डगलस मैक्ग्रेगर ने अभिप्रेरणा से संबंधित दो सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं। उनका प्रथम सिद्धान्त 'एक्स' मानव प्रकृति के बारे में निराशावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह सिद्धान्त इस मूल विश्वास पर आधारित है कि व्यक्ति या कार्मिक कार्य करना नहीं चाहते अतः उनसे काम लेने के लिए नकारात्मक अभिप्रेरणा आवश्यक है। अर्थात् भय के द्वारा ही इनसे काम करवाया जा सकता।

मैक्ग्रेगर का 'वाई सिद्धान्त' इस मूलभूत अवधारणा पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वभाव से ही निष्क्रिय एवं अविश्वसनीय नहीं होता है। यदि उसे ठीक से अभिप्रेरित किया जाये तो वह स्वयं कार्य के प्रति निष्ठावान होकर श्रेष्ठतर उत्पादन कर सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में संगठन सम्बन्धी समस्याओं के निराकरण की रचनात्मक क्षमता होती है और प्रबन्धकों को चाहिए कि उस क्षमता को विकसित करें।

(4) फ्रेडरिक हर्जबर्ग का द्विघटक सिद्धान्त– हर्जबर्ग अभिप्रेरणा के तत्वों को दो समूह में विभाजित करता है–

(1) आरोग्य तत्व

(2) अभिप्रेरक

प्रशासनिक चिन्तक हर्जबर्ग के अनुसार जब कोई कार्मिक अपने कार्य से असन्तुष्ट होता है तो उसके असन्तोष के लिए उत्तरदायी कारकों में प्रमुख कारण वह वातावरण होता है जिसमें वह कार्य करता है। इसे ही उसने 'आरोग्य तत्व' कहा है। इस आरोग्य तत्व को प्रभावित करने वाले कारक हैं– संगठन की नीति, वेतन, हैसियत, अधीनस्थों एवं पर्यवेक्षक से सम्बन्ध एवं अन्तरवैयक्ति सम्बन्ध। इसी प्रकार जब कोई कर्मचारी अपने कार्य से संतुष्ट होता है तो उसे हर्जबर्ग ने 'अभिप्रेरक' कहा है। अभिप्रेरकों में कार्य उपलब्धियाँ, पहचान, उत्तरदायित्व तथा उन्नति के अवसर इत्यादि सम्मिलित हैं। अतः यह सिद्धान्त कहता है कि कर्मचारियों को कार्य के प्रति असंतुष्टि कम करने के लिए 'आरोग्य तत्वों' की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

(5) आऊची का 'जैड' सिद्धान्त– इस सिद्धान्त का प्रतिपादन आऊची ने किया है। आऊची की जैड विचारधारा 'दल भावना' पर आधारित है। विश्वास, कुशाग्रता, आत्मीयता, सामूहिक निर्णयन और सामूहिक उत्तरदायित्व इसके प्रमुख तत्व हैं। दलभावना अभिप्रेरणा का मूल है।

(6) लिकर्ट का प्रबन्ध सिद्धान्त– लिकर्ट ने प्रबन्धन की कुशलता पर प्रकाश डाला है। उन्होंने चार प्रकार की प्रबन्ध व्यवस्था का उल्लेख किया है–

(1)	स्वार्थी सर्वसत्ताधारी	(प्रथम व्यवस्था)
(2)	सहयोगी सर्वसत्ताधारी	(द्वितीय व्यवस्था)
(3)	परामर्शीय	(तृतीय व्यवस्था)
(4)	सहभागी	(चतुर्थ व्यवस्था)

इसमें प्रथम प्रकार की व्यवस्था कार्य–केन्द्रित है। इसके अन्तर्गत प्रबन्धकीय प्रणाली परम्परागत विधि द्वारा नियंत्रित की जाती है। चतुर्थ व्यवस्था (सहभागी) लोकतांत्रिक व्यवस्था है। जिसमें दलकार्य (टीमवर्क), आपसी विश्वास और सहभागिता है। द्वितीय एवं तृतीय व्यवस्था इन दोनों के बीच की अवस्था है। कर्मचारियों को सहभागिता प्रदान करके तथा मानवतापूर्ण व्यवहार करके प्रेरित किया जाए तो अधिक सफलता मिल सकती है।

12.6 मनोबल अर्थ महत्व एवं विशेषताएं

प्रशासन में कार्यकुशलता हेतु मनोबल एक महत्वपूर्ण तत्व है। जब प्रशासन में मानवीय सम्बन्धों और मनोवैज्ञानिक दशाओं पर बल दिया जाता है तो मनोबल का महत्व बढ़ जाता है।

मनोबल को व्यक्ति की आन्तरिक मानसिक शक्ति और आत्मविश्वास का पर्याय माना जाता है। मनोबल का तात्पर्य उस बल से है 'जो व्यक्ति को उर्जा एवं स्फूर्ति प्रदान करता है। यह किसी कार्मिक की कार्य के प्रति उसकी अभिवृत्तियों का भी परिचायक है।' इस सन्दर्भ में मनोबल व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों ही प्रकार की स्थिति स्पष्ट करता है। व्यक्तिगत मनोबल कार्मिक का अपने कार्य के प्रति अभिवृत्ति का परिचायक है, वहीं समूह मनोबल कार्मिकों की संगठन के प्रति उनकी सामान्य विचारधारा का परिचारक है। मनोबल प्रसन्नता, आत्मविश्वास, उत्साह इत्यादि से सम्बद्ध एक मानसिक अवस्था है।

लीटन ने मनोबल के सामूहिक पक्ष पर ध्यान दिया है। उसके अनुसार ''मनोबल व्यक्तियों के सामूहिक लक्ष्य की खोज में धैर्य के साथ एवं निरन्तर एक साथ चलने की क्षमता है।''

वेन्सटर के अनुसार ''मनोबल वह मानसिक अवस्था, जो उत्साह, भावना, आशा, विश्वास जैसे मानसिक घटकों पर निर्भर करती है।

महत्व एवं विशेषताएँ :–

लोक सेवा की सफलता का मूल मंत्र लोक सेवकों का उच्च मनोबल है। यह प्रेरणा देने वाला तत्व है

जिसका जन्म कर्मचारियों के मस्तिष्क एवं हृदय में होता है। एक स्वस्थ मनोबल, निष्ठा, सहकारिता और मिल–जुलकर काम करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है। मनोबल व्यक्तिगत और संस्थागत दोनों रूपों में मूल्यवान है। व्यक्तिगत रूप में यह कर्मचारी को सम्मान दिलाता है। संस्थागत रूप में यह एक आकर्षक व्यक्ति समूह का आकर धारण करता है और संगठन में सहयोग की भावना को जन्म देता है।

मनोबल के निम्नांकित चार प्रमुख विशेषताएँ हैं–

(1) **व्यापक दृष्टिकोण**– मनोबल में एक व्यापक दृष्टिकोण की झलक मिलती है। इसमें कार्य के वातावरण, सहयोगियों, संस्था के उद्देश्यों और अपने कार्य प्रति व्यापक दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं।

(2) **सापेक्षिक**– मनोबल का आशय उसी समय दृष्टिगोचर होता है जब इसका प्रयोग किसी विशेष सन्दर्भ में उच्च या निम्न मनोबल के लिए किया जाता है।

(3) **व्यक्तिगत एवं सामूहिक**– एक व्यक्ति विशेष के उत्साह तथा दूसरा टीम भावना के रूप में सामूहिक दृष्टिकोण को दर्शाता है।

(4) **मिश्रित अनुभूति**– यह एक मानसिक दशा है जिस पर अनेक तत्वों का प्रभाव पड़ता है। इसमें बीते हुए कल के लिए सन्तोष, वर्तमान का उत्साह और भविष्य की आशा की झलक मिलती है।

12.7 मनोबल को प्रभावित करने वाला तत्व

मनोबल के निर्माण में निम्नांकित प्रमुख तत्वों का उल्लेख किया जा सकता है–

(1) संगठन और उसके उद्देश्यों का बोध

(2) उच्च स्तरीय अधिकारियों की सत्यनिष्ठा पर विश्वास

(3) नीति निर्माण में भागीदारी

(4) प्रभावकारी नेतृत्व क्षमता का साथ

(5) निष्ठा

(6) कार्य सुगम परिस्थितियाँ

(7) मानवीय सम्बन्धों का विकास। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोबल सार्वजनिक प्रशासन की उत्पादकता बढ़ाने और कार्यदक्षता की स्थापना में आवश्यक है।

एडविन फिलिपों ने अपनी पुस्तक 'Principles of Personnel Management' में मनोबल को प्रभावित करने वाले निम्न 10 कारकों का वर्णन किया है–

(1) वेतन (2) सुरक्षा (3) कार्य की दशाएं (4) अवसर (5) उचित एवं योग्य नेतृत्व (6) किए जाने वाले कार्य की प्रशंसा (7) सहयोगियों की अनुकूलता (8) उचित सक्रियता (9) कर्मचारियों के लाभ (10) सामाजिक प्रतिष्ठा।

12.8 मनोबल एवं अभिप्रेरणा में अन्तर

मनोबल एवं अभिप्रेरणा दोनों के वर्णन के उपरान्त यह ज्ञात होता है कि दोनों अलग–अलग होते हुए भी परस्पर एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। मनोबल स्वयं कार्य करने की इच्छा तथा कार्यक्षमता के बीच पुल का कार्य करने वाला तत्व माना जाता है। मनोबल व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों स्तर पर हो सकता है। एक संगठन में कार्य करने वाले कार्मिकों का बल समूह सामंजस्य के रूप में देखा जा सकता है। यदि मनोबल निम्न स्तरीय है तो उसे निश्चित समाधानों से उच्च स्तरीय भी किया जा सकता है किन्तु अभिप्रेरणा एक ऐसा तत्व है जो समूह पर लागू नहीं किया जा सकता।

मनोबल और अभिप्रेरणा को पूर्णतया अलग करके नहीं देखा जा सकता है। सामान्यतः प्रेरणा उस वाह्य वस्तु को कह सकते हैं जो व्यक्ति दूसरे को देता है। इसी प्रकार वेतन, सुविधाएँ तथा भौतिक वस्तुएँ भी प्रेरणा का कार्य करती हैं। अभिप्रेरणा एक आन्तरिक अनुभूति है जो व्यक्ति स्वयं को देता है, लेकिन स्वयं को अभिप्रेरित करने के लिए कुछ कारक तत्व निश्चित रूप से होते हैं। इसी प्रकार मनोबल किसी व्यक्ति के आत्मविश्वास या आन्तरिक

आत्मबल से जुड़ाव रखता है। मनोबल एक ऐसी शक्ति है जिसकी सीमा अनंत है।

12.9 सारांश

उपर्युक्त विवेचना के फलस्वरूप अभिप्रेरणा और मनोबल के प्रकरण में कह सकते हैं कि दोनों ही एक–दूसरे से प्रगाढ़ता से जुड़े हैं। तथ्यतः किसी कर्मचारी के कार्य निष्पादन का स्तर अभिप्रेरणा तथा मनोबल दोनों से सुनिश्चित होता है। मनोबल अभिप्रेरणा का ही परिणाम है। यह तथ्य प्रतिपादन योग्य है कि अभिप्रेरणा का अन्तिम लक्ष्य संगठन तथा कार्मिक दोनों के ही लाभ एवं भले के लिए कार्य करना है। इस प्रकार उच्च अधिकारी का यह कर्तव्य बनता है कि वह कर्मचारियों के मनोबल का उच्च स्तर पर बनाए रखें।

12.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :–

(1) अभिप्रेरणा के अर्थ, महत्व एवं विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

(2) अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में प्रतिपादित विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों की आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

(3) मनोबल को प्रभावित करने वाले कारकों को स्पष्ट कीजिए।

(4) 'मनोबल और अभिप्रेरणा एक सिक्के के दो पहलू हैं।' इस कथन का परीक्षण कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न :–

(1) किस आयाग ने अभिप्रेरणा के लिए मौद्रिक प्रोत्साहन की अनुशंसा की ?

(A) द्वितीय वेतन आयोग

(B) तृतीय वेतन आयोग

(C) पंचम वेतन आयोग

(D) छठा वेतन आयोग

(2) कौन अभिप्रेरणा के पाँच सोपान की बात करता है ?

(A) मैस्लो

(B) आऊची

(C) टेलर

(D) लिकर्ट

(3) आरोग्य तत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किसने किया है ?

(A) मैस्लो

(B) टेलर

(C) लिकर्ट

(D) हर्जबर्ग

(4) किसने मनोबल के सामूहिक पक्ष को स्पष्ट किया ?

(A) लीटन

(B) फिलिपों

(C) आऊची

(D) लिकर्ट

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर–

(1) D (2) A (3) D (4) A

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

- घोष, पी0 परसोनल एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, सुधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1969।
- गोयल, एस0एल0, रजनीश शालिनी, 2006 दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- अवस्थी एवं महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2018 ।
- चक्रवर्ती, विद्युत एवं प्रकाश चन्द, वैश्वीकृत दुनिया में लोक प्रशासन, सेज भाषा 2018।
- भट्टाचार्य, मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम जवाहर पब्लिशर्स, 2021 ।
- बसु, रूमिकी पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, स्टार्लिंग पब्लिशर्स 2016।